अक्तूबर : 1981 मूल्य : 1 रुपया

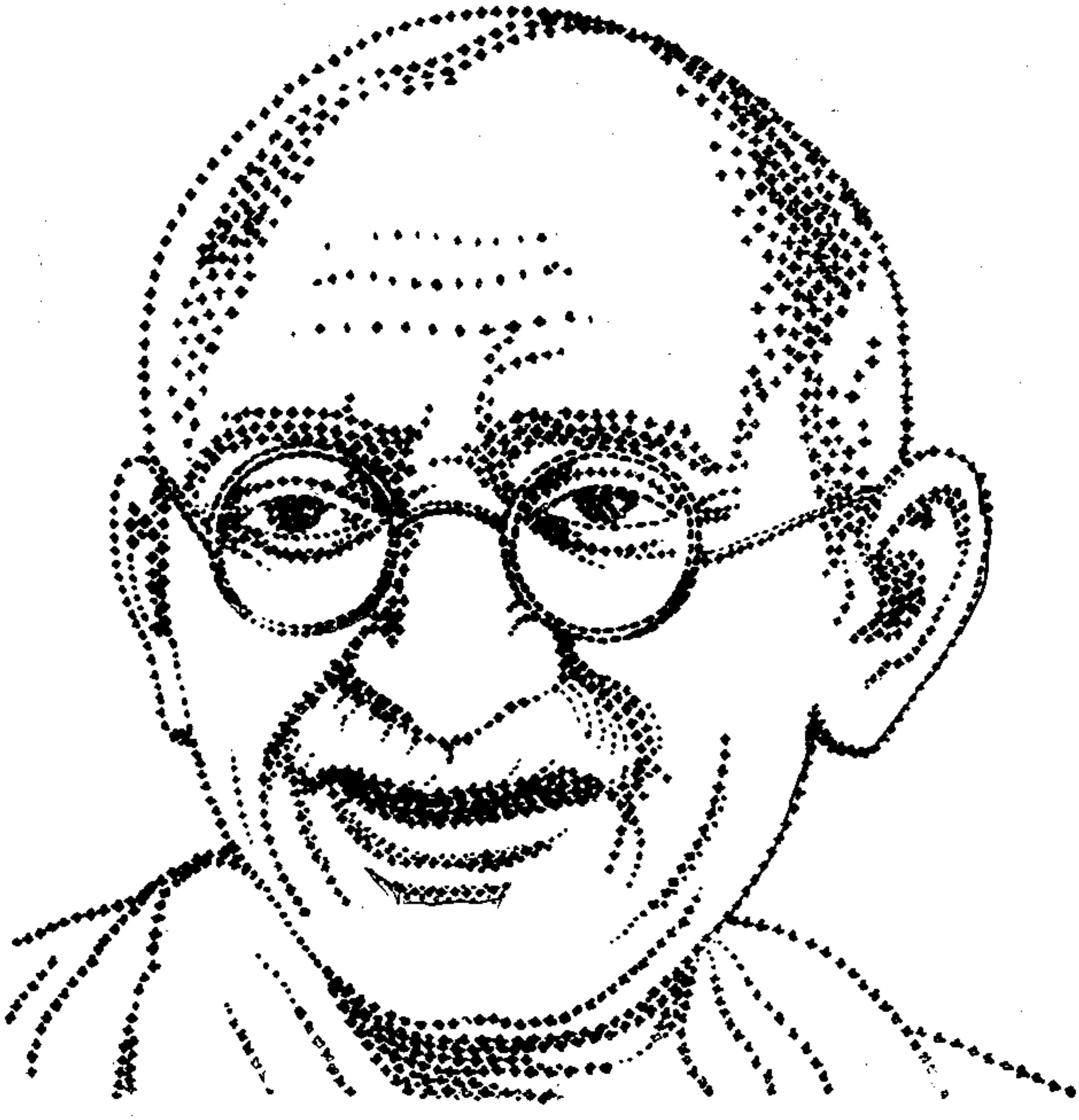

मेरे सपनों का भारत

मैं एक ऐसा भारत बनाने के लिए कार्य करूंगा जिसमें गरीब से गरीब यह महसूस करे कि यह उसका अपना देश है जिसके निर्माण में उसकी कारगर आवाज होगी, जिसमें नीचे और ऊंचे लोग नहीं होंगे, जिसमें सभी जातियां पूर्ण शांति के साथ रहेंगी... स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार होंगे ।... दुनिया के बाकी हिस्से के साथ हमारे शांतिपूर्ण संबंध होंगे, न हम किसी का शोषण करेंगे और न कोई हमारा शोषण करेगा... सभी विदेशी या स्वदेशी हितों को, जो कि लाखों मूक प्राणियों के हितों के विरुद्ध नहीं हैं, सम्मान दिया जायगा ।...ऐसा है मेरे सपनों का भारत जिसके लिए मैं संघर्ष करूंगा ।

—मो० क० गांधी

संपादकीय

गांवों में खेल-कूदों को बढ़ावा क्यों नहीं

हमारे देश में खेल-कूदों की परम्परा बहुत प्राचीन है। स्वास्थ्य और बलवर्धन के लिए हमेशा ही खेल कूदों का सहारा लिया जाता रहा है। अंग्रेजी शासन काल में गांव-गांव में पहलवान व लम्बी-ऊंची कूदों की प्रतियोगिताएं होती थीं और गदकेबाजी, तीरन्दाजी तथा भार उठाने जैसे व्यायामों का भी प्रचार-प्रसार था। पर कैसी विडम्बना है कि आज के हमारे स्वतंत्र भारत के गांवों में व्यायाम के सारे क्रियाकलाप नदारद हैं। सरकार देश में खेलों को बढ़ावा देने के लिए प्रतिवर्ष लाखों रुपये खर्च करती है पर इस धन का जितना हिस्सा गांवों में खेलों के विकास पर खर्च होता है उसे नगण्य ही कहा जायगा। इसमें दो राय नहीं कि हमारे गांव खेलों और खिलाड़ियों के विकास के क्षेत्र में काफी उपेक्षित रहे हैं। राष्ट्रीय खेल परिषद् ने भी अपना ध्यान शहरों में ही खेलों और खिलाड़ियों के विकास पर केन्द्रित रखा है। यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय खेल जगत् में हमारे खिलाड़ियों को कोई प्रतिष्ठा का स्थान प्राप्त नहीं। अन्तर्राष्ट्रीय खेल प्रतियोगिताओं में हमारे खिलाड़ी दशाब्दियों से मुंह की खाते आ रहे हैं और जो भारत किसी समय हाकी और पहलवानी के खेलों में विश्व-विजेता था आज वह उनमें भी पिछड़ गया है जबकि क्यूबा, केन्या वैस्ट-इंडीज, पूर्वी जर्मनी आदि जैसे छोटे-छोटे देशों के खिलाड़ियों ने भी खेलों में अपने-अपने देशों की प्रतिष्ठा को ऊंचा उठाया है। जब तक हम गांवों में खेलों के विकास को प्रोत्साहन नहीं देंगे तब तक हम देश में गामा जैसा विश्व विजयी पहलवान पैदा नहीं कर सकते। गांवों की आबोहवा, गांवों के शुद्ध सात्विक खान-पान तथा गांवों के रहन-सहन से ही अच्छे खिलाड़ी पैदा हो सकते हैं और गांवों के हट्टे-कट्टे जवान ही सेनाओं में भरती होकर हमारी सीमाओं की रक्षा कर सकते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सबसे बड़ी दुखद बात यह हुई है कि आज से तीस-बत्तीस साल पहले हमारे गांवों में जहां शराब का कोई नाम तक नहीं जानता था वहां अब शराब की नालियां बहने लगी हैं। यही कारण है कि हमारे ग्रामीण युवक शारीरिक, मानसिक और चारित्रिक दृष्टि से पतन की ओर अग्रसर हैं। यह स्थिति बड़ी दुखद और भयावह है। यदि समय रहते हमने इस पर ध्यान न दिया तो न हमें अपनी सीमाओं की रक्षा के लिए हट्टे-कट्टे लंगोट के पक्के जवान मिल सकेंगे और न हम अच्छे खिलाड़ी ही पैदा कर सकेंगे।

एक जमाना था जब गांवों में दूध बेचना पाप समझा जाता था परन्तु आज गांवों का सारा घी-दूध शहरों में खिंचा चला आता है जबकि ग्रामीणों को छाछ तक उपलब्ध नहीं है। फिर रूखी-सूखी खाकर कोई कैसे अच्छा खिलाड़ी या पहलवान बन सकता है। अतः गांवों के लोगों में ऐसी भावना पैदा की जाए कि वे घी-दूध की बिक्री को पाप समझें। जहां तक शहरों में लोगों के लिए घी-दूध की आवश्यकताओं का संबंध है, वहां डेयरियां खोल कर पूरा किया जा सकता है परन्तु यह ठीक नहीं कि गांवों से घी-दूध शहरों में लाकर गांवों के लोगों को उनके इस शुद्ध सात्विक खान-पान से वंचित रखा जाए। यदि देश को सामरिक और खेलों की दृष्टि से बलवान बनाना है तो गांव के लोगों को स्वस्थ, सबल और कर्मठ बनने की सुविधाएं और साधन उपलब्ध करने ही होंगे। गांधी जी व्यक्ति और राष्ट्र को सबल और स्वस्थ बनाने के लिए ब्रह्मचर्य, सात्विक खान-पान, सात्विक रहन-सहन, खेल-कूद आदि पर विशेष बल देते थे। आज उनकी वर्ष गांठ के अवसर पर हमारा यह निश्चय होना चाहिए कि हम उनके बताए मंत्रों को अपने जीवन में उतारें और सीमा पार के खतरों को ध्यान में रखकर देश को स्वस्थ और सबल बनाएं।

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण पुनर्निर्माण मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

एक प्रति 1 रु० : वार्षिक चंदा 10 रु०

●

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : जीवन अडालजा

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण पुर्नानिर्माण का प्रमुख मासिक

वर्ष 26 | कार्तिक-आश्विन 1903 | अंक 12

इस अंक में : पृष्ठ संख्या

बापू की समाज कल्याण भावना 2
बनवारी लाल ऊमर वैश्य
अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष में जन-संचार माध्यमों की भूमिका 4
वसन्त साठे
बढ़ती बेरोजगारी की समस्या और समाधान 6
एस० के० सक्सेना
सुनी हमने कश्मीर में भी हिमालय की कराह 10
सुन्दरलाल बहुगुना
प्राचीन भारत में साम्प्रदायिक सद्भाव 13
डा० महावीर सिंह
बांस की झोंपड़ियों में नए भोर की आहट 15
जगमोहन लाल माथुर
गांवों के गरीब लोगों के लिए आवास 18
जी०सी० माथुर
छठी पंचवर्षीय योजना 20
डा० गिरीश मिश्र
बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए समन्वित प्रयास 22
शानदार अतीत का धनी भारत 25
ब्रजलाल उनियाल
पशुधन का विकास 27
छोटे उद्योगों से ही गरीबी निवारण सम्भव 29
समुदाय मूलक शिक्षा तथा युवकों का दायित्व 31
महेश चन्द्र शर्मा
अब ऊसर भूमि से भी फसल ली जा सकती है 34
जगदीश प्रसाद रोहिल्ल
मधुमक्खी पालन : एक लाभदायक सहायक धन्धा 36
भारत कब हिन्दी बोलेगा 38
अभिमन्यु अनत, मारीशस
पर्यावरण, प्रदूषण रोकने में वृक्षों की भूमिका 39
राजमणि पाण्डेय

स्थायी स्तम्भ

साहित्य समीक्षा : केन्द्र के समाचार: कविता : कहानी : इत्यादि ।

बापू की समाज कल्याण भावना

बनवारी लाल ऊमर वैश्य

प्रातः स्मरणीय बापू का सम्पूर्ण जीवन समाज के लिए समर्पित था। राजनीति के परिप्रेक्ष्य में विवेचना न कर उनके समाजगत कार्यों का आकलन करें तो बापू विशुद्ध समाज सेवी और सामाजिक विचारधारा के मसीहा थे। वे आधुनिक भारत के सन्त कबीर और नव–समाज के निर्माता थे। अपनी खण्डन पद्धति से कबीर ने छुआछूत, पारस्परिक भेद-भाव और आडम्बरों की जैसी धज्जी उड़ाई थीं, वैसा ही कार्य बापू ने सत्य, अहिंसा और प्रेम के आधार पर किया था। वे ऋषि थे जिन्होंने सड़ी गली संस्कृति से पोषित समाज को बदल दिया था। उन्होंने ऐसी अग्नि वीणा झंकृत की थी जिसकी झंकार से समाज में नवजीवन और नई चेतना की लहर आ गयी थी। करोड़ों जन बापू के पद चिह्नों पर चलने लगे थे। सचमुच में बापू युगान्तकारी और क्रान्तिकारी पुरुष थे। वे राष्ट्र की महान आत्मा थे। राष्ट्र कवि सोहन लाल द्विवेदी के शब्दों में—

"दीन दलित जनगण के त्राता, मृत हत जीवन जन्म विधाता।

युग युग अक्षय हे! जय जय निर्भय हे!

शोषित पीड़ित जन के नायक, नव युग राष्ट्र विधायक,

महामुक्ति के कर्मठ गायक, जय जय निर्भय हे!

हरिजन कल्याण

सत्रहवीं शताब्दी में राजाराम मोहन राय ने समाज में फैली कुरीतियों के प्रति विद्रोह किया था जिसके फलस्वरूप सती-प्रथा जैसी क्रूर प्रथाएं बन्द हो गई थीं। इस प्रथा के अन्तर्गत जीवित अवस्था में मृतक पति के साथ पत्नी को अग्नि में जलना पड़ता था। अनेक फूल जैसी युवतियों को आत्मदाह करना पड़ता था। स्वतंत्रता के पूर्व देश में एक घिनौनी प्रथा थी हरिजनों को स्पर्श न किया जाए, उन्हें मन्दिर में प्रवेश के लिए रोका जाए और सार्वजनिक कुएं, चैत्य और मठों में न जाने दिया जाए। बापू ने ऐसी क्रूर प्रथा के प्रति खुला विद्रोह किया। वे हरिजन कल्याण के लिए चल पड़े। अस्पृश्यता के विरोध में उन्होंने शीतयुद्ध किया। हरिजनों के मन्दिर प्रवेश में रुकावट के लिए उन्होंने समाज को धिक्कारा। इस सामाजिक क्रान्ति युग में मंगल प्रभात उदय हुआ। 'हरिजन हमारे भाई हैं,' "मैं तो यही कहूंगा कि जहां हरिजनों का प्रवेश नहीं है वे मन्दिर अपवित्र हैं।" "मैं अस्पृश्यता को हिन्दू धर्म समाज का सर्वोच्च कलंक मानता हूं" "भंगी का अर्थ है सबका शुभ चिन्तक," आदि बापू की गर्जना से समाज कांप उठा। मन्दिरों और सवर्ण समाज में हरिजन प्रतिष्ठित हुए। समाज ने उन्हें गले लगाया। अब हरिजन शिक्षा, समाज, विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्र में अग्रसर हैं। उनके उत्थान के लिए सरकार ने अनेक योजनाएं चलायी हैं।

भारत के प्रत्येक राज्य में हरिजनों के कल्याण और उत्थान के लिए अनेक कार्य हो रहे हैं। उन्हें सरकारी सेवाओं में प्राथमिकता दी जा रही है। हरिजनों के जीवन क्षेत्र में इन्द्र धनुषी छटाएं बिखर रही हैं। मजदूरों के कल्याण के सम्बन्ध में बापू यंग इण्डिया में लिखते हैं "........मिल मालिकों को भी अपने मजदूरों और अन्य कर्मचारियों के कल्याण में माता-पिता जैसी दिलचस्पी लेनी चाहिए।"

महिला उत्थान

सामन्ती युग में नारियां भोग्या के रूप में समाज में प्रतिष्ठित हो गयी थीं। तत्कालीन साहित्य में उनके मांसल सौन्दर्य का ही वर्णन किया गया है। वे समाज की योग्या न बन पाई थीं। पुरुष उन्हें वासना के लिए प्रयोग करता था। उनके अधिकार पुरुषों के समान न थे जिसके कारण वे समाज में तिरस्कृत जीवन जी रही थीं। अनमेल विवाह, बालविवाह आदि प्रथाएं महिला जीवन को धूमिल बना रही थीं। बापू ने महिला-उत्थान के लिए शंखनाद किया। वे 'हरिजन' पत्रिका में लिखते हैं—"मैं स्त्री-पुरुष की समानता में विश्वास करता हूं, इसलिए स्त्रियों के लिए उन्हीं अधिकारों की कल्पना कर सकता हूं, जो पुरुषों को प्राप्त हैं।"

पुरुष नारी पर अत्याचार न करें। इसके विषय में बापू के विचार सुनिए—पुरुष अपनी पत्नी को उसका विशेष काम छोड़ देने के लिए ललचाएगा या मजबूर करेगा तो इसका पाप उसके सिर पर रहेगा।............ स्त्री स्वभाव से गृहस्वामिनी है। पुरुष रोटी कमाने वाला है। ....सामान्य नियम के तौर पर मैं जीवन भर एक पुरुष के लिए एक पत्नी के और एक स्त्री के लिए एक पति के पक्ष में हूं।

आज नारियों के अधिकार पुरुषों के समान हैं। वे सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चल रही हैं। राजनीति के क्षेत्र में तो महिलाओं का स्वर्णयुग आ गया है। प्रशासन, शिक्षा, विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्रों में महिलाएं अग्रसर हैं। हमारी सरकार महिलाओं पर हो रहे पाशविक अत्याचार को रोकने के लिए विचार कर रही है। दहेज उन्मूलन पर कानून बनाए गए हैं।

कृषक : धरती के देवता

भारत कृषि प्रधान देश है। कृषक धरती के देवता माने जाते हैं। बापू को कृषक बड़े प्यारे और दुलारे थे। वे जानते थे कि कृषक समाज का भरण-पोषण करता है। मिट्टी में पसीना बहाकर सोना पैदा करता है। बापू कृषक सभ्यता से बहुत प्रभावित थे। स्वतन्त्रता के बाद कृषकों की दशा सुधरी है। सरकार ने बापू के स्वप्नों को साकार बनाया है। बापू ने हरिजन पत्रिका में लिखा है :—

"सभी इतिहासकारों ने साक्षी दी है कि जो सभ्यता हिन्दुस्तान के किसानों में मिलती है, वैसी सभ्यता संसार के किन्हीं किसानों में नहीं पाई जाती।"

बनवारीलाल ऊमर वैश्य
डंकीन गंज, मिर्जापुर।

पहचान

आँख, नाक, कान उम्र नापने से होती नहीं, नहीं नाप ऊंच नीच बताने से होती है।

नहीं नाप नाप लंबा चौड़ा सीना नापने से होती, नहीं नाप थी अकड़ दिखाने से होती है।

नाप नहीं वृद्धि-शिथिल इन्द्रियों से होती कभी, नहीं नाप जवानी को सताने से होती है।

'नागर' ने देखा चाहे जिधर से भी नाप देखो जवानी की नाप दिल के पैमाने से होती है।

खेमसिंह नागर
नगला पदम,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष में जन-संचार माध्यमों की भूमिका

*

वसन्त साठे,
केन्द्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री

भारत में विकलांगों की संख्या के सही आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, तो भी विकलांगों की समस्या इतनी बड़ी है कि इसके लिए चिन्तित होना स्वाभाविक है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार प्रत्येक देश की जनसंख्या के लगभग 10 प्रतिशत के बराबर लोग विकलांग होते हैं। भारत में विकलांगों की संख्या छह करोड़ से भी अधिक बैठती है। यह संख्या निश्चित रूप से चौंका देने वाली है। वर्ष 1981 को अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के रूप में मनाया जाना जनसंख्या के इस बड़े भाग की समस्याओं की तरफ ध्यान देने की दृष्टि से एक स्वागत योग्य अवसर है।

वर्ष 1981 को अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष घोषित करने संबंधी प्रस्ताव में संयुक्त राष्ट्र सभा द्वारा निर्धारित लक्ष्य इस प्रकार है: विकलांगों की शारीरिक और मनोवैज्ञानिक रूप से तालमेल बैठाने में सहायता करना; विकलांगों की सहायता व उनकी देखभाल करने तथा उन्हें समुचित प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों को बढ़ावा देना; विकलांगों के लिए अध्ययन और अनुसंधान परियोजनाओं को बढ़ावा देना; विकलांगों के अधिकारों के प्रति जनता को जागरूक बनाना; अपंगता की रोकथाम के लिए प्रभावशाली उपायों को प्रोत्साहित करना और विकलांग व्यक्तियों का पुनर्वास करना। वर्ष 1981 को 'अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष' घोषित करने संबंधी प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने वाले देशों में भारत भी है।

इस वर्ष का मुख्य विषय है 'पूर्ण योगदान और समानता'। दूसरे शब्दों में विकलांगों के प्रति अलगाव की वर्तमान प्रवृत्ति के स्थान पर उन्हें अपने साथ शामिल करने की प्रवृति अपनाई जानी चाहिए। विकलांग बच्चों को ऐसे विशेष आवासीय स्कूलों में पढ़ाने के स्थान पर जहां उन्हें अपने माता-पिता का प्यार-दुलार नहीं मिल पाता है, साधारण स्कूलों में शिक्षा दी जानी चाहिए। विकलांग व्यक्तियों को विशेष संरक्षण में रोजगार देना वांछित है लेकिन उन्हें सामान्य व्यक्तियों के बीच काम करने के अवसर देने के लिए अधिक प्रयास किए जाने चाहिए।

आम लोगों द्वारा विकलांगों की समस्याओं को भली-भांति समझने के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करने तथा उन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा में शामिल करने के लिए प्रयासों में तेजी लाने में जनसंचार माध्यमों की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसके लिए आवश्यक यह है कि आम लोगों में चेतना पैदा की जाए और विकलांगों के प्रति पूर्वाग्रहों और गलत धारणाओं की बेड़ियां तोड़ी जाएं।

हमारे देश में विकलांगों की बहुत बड़ी संख्या होना ही दुखद बात ही नहीं है बल्कि यह भी एक दुखद पहलू है कि इनमें से बहुतों को विकलांग बनने से रोका जा सकता था। हमारे यहां विकलांगों की संख्या बहुत अधिक होने के अनेक कारण हैं। इनमें देहाती इलाकों और शहर की गन्दी बस्तियों के लोगों के स्वास्थ्य की देखभाल करने संबंधी समुचित जानकारी न होना, उनकी निरक्षरता और उनका स्वास्थ्य खराब होना है। संचार माध्यमों का काम विशेषकर समाज के कमजोर और पिछड़े वर्गों में स्वास्थ्य की देखभाल करने की आवश्यकता, पढ़ने की प्रवृति को बढ़ावा देने, स्वच्छता रखने और बीमारियों की रोकथाम के लिए उपाय करने के प्रति चेतना पैदा करना है। इनके माध्यमों से विकलांगों को यह भी बताना चाहिए कि सरकार और स्वयंसेवी संस्थाएं उनके पुनर्वास और कल्याण के लिए क्या उपाय कर रही हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के लिए एक राष्ट्रीय कार्य योजना पर विचार करने और इसे अंतिम रूप देने तथा समय-समय पर इसके कार्यान्वियन की समीक्षा करने के लिए भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय समिति का गठन किया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सूचना और प्रसारण मंत्रालय को विकलांग बच्चे का घर में तथा कार्यालय, कारखाने और खेत में एक विकलांग कर्मचारी का स्वस्थ पहलु प्रस्तुत करने; समाज पर विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर प्रकाश डालने; जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में योगदान के लिए विकलांगों की क्षमता के बारे में जानकारी देने; विकलांगों के पुनर्वास में आधुनिक प्रौद्योगिकी के योगदान की

पूर्ण जानकारी का प्रसार करने में जन-संचार माध्यमों का पूरा-पूरा उपयोग करने तथा विकलांगों का संचार माध्यमों के जरिए अपनी समस्याएं और अपनी क्षमता और योग्यता के बारे में बताने का अवसर देने का काम सौंपा गया है।

प्रधान मंत्री द्वारा जन चेतना पर बल

प्रधान मंत्री ने 5 जनवरी, 1981 को अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष का औपचारिक रूप से उद्घाटन किया जिसमें उन्होंने जोरदार शब्दों में लोगों से विकलांगों पर दया न करके उनके साथ संवेदनशील और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने को कहा क्योंकि यह भावना कहीं अधिक गहरी होती है और इससे रचनात्मक सहयोग मिलता है। रचनात्मक कार्य करने की प्रधानमंत्री की अपील ने भारत में अंतराष्ट्रीय विकलांग वर्ष को मनाने के लिए एक दिशा प्रदान की। इससे सूचना और प्रसारण मंत्रालय की विभिन्न इकाइयों को भी मार्गनिर्देश मिला।

जनता को विकलांगों की समस्याओं के विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने के लिए उनकी क्षमता के बारे में बताने के लिए आकाशवाणी और दूरदर्शन से विशेष कार्यक्रम प्रसारित किए जाते रहे हैं। ऐसे विकलांग व्यक्तियों की भेंटवार्ताएं प्रसारित की गईं जिन्होंने अपने जीवन में कड़ा संघर्ष किया और सफलता पाई। विकलांगों के कल्याण और पुनर्वास से संबद्ध विशेषज्ञों और समाज सेवकों को भी अपने अनुभव जनता को बताने के लिए आमंत्रित किया जाता है।

फिल्म प्रभाग ने अपंगों के पुनर्वास और उन्हें रोजगार देने; राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में नेत्रहीनों को प्रशिक्षण देने, उन्हें कुशल कारीगर बनाने तथा रोजगार दिए जाने और देहाती क्षेत्रों में अपंगों के पुनर्वास के बारे में फिल्में बनानी शुरू की हैं। चालू वर्ष के निर्माण कार्यक्रम में दो फिल्में और शामिल की गई हैं। साप्ताहिक समाचार चित्रों में भी इस विषय को प्रमुख स्थान दिया गया है।

क्षेत्रीय प्रचार निदेशालय अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष के मुख्य विषय के बारे में निरन्तर प्रचार कर रहा है। इस वर्ष के प्रारम्भ से ही क्षेत्रीय इकाइयों ने विकलांगों की समस्याओं तथा इन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए आवश्यक सहायता देने के बारे में लोगों को जागरूक बनाने के लिए एक अभियान चलाया हुआ है। विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय ने विकलांग वर्ष के मुख्य विषय "पूर्ण योग-दान और समानता" पर तीन पोस्टर तैयार किए हैं। अंग्रेजी और हिन्दी में एक पुस्तिका प्रकाशित की है। समाज कल्याण मंत्रालय के साथ विचार-विमर्श करने के बाद कुछ और फोल्डर प्रकाशित किए जाएंगे।

विकलांगों का पुनर्वास एक सतत प्रक्रिया है जो एक ही वर्ष में पूरी नहीं हो सकती। लेकिन यदि अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष समाज में इस मानवीय समस्या के प्रति चेतना पैदा करने में सफल रहता है तो इसके लक्ष्य की पूर्ति हो जाएगी। □

कोई बात नहीं

न हंसाओ किसी को, कोई बात नहीं
हंस रहे हैं जो, उन्हें रुलाओ तो नहीं।
न बनो लाठी किसी की, कोई बात नहीं,
मगर लाठी किसी की तुम, तोड़ गिराओ तो नहीं।
न जीओ औरों के लिए, कोई बात नहीं,
जी रहे हैं जो किसी तरह, उन्हें और सताओ तो नहीं।
न दो दो रोटी किसी को, कोई बात नहीं,
खा रहे हैं जो किसी तरह रोटी, तुम छीनो तो नहीं।
न उठाओ ऊपर किसी को, कोई बात नहीं,
गिर गिर कर उठे हैं जो, उन्हें गिराओ तो नहीं ।
न बनो फरिश्ता तुम, कोई बात नहीं,
मगर इन्सानियत के मंच से, स्वयं को गिराओ तो नहीं ।

ओमप्रकाश निर्वाल
ई-134, साध नगर,
पालम कालोनी,
नई दिल्ली-110045

बढ़ती बेरोजगारी की समस्या और समाधान

*

एस० के० सक्सेना

गांधी जी ने लगभग आधी सदी पहले 'हरिजन पत्रिका' में लिखा था कि असलियत यह है कि ऐसे देश की अर्थ-व्यवस्था और सभ्यता, जहां की धरती पर अधिकतम आबादी का बोझ है, उस देश की अर्थव्यवस्था और सभ्यता से निश्चित रूप से भिन्न होगी, जहां की आबादी सबसे कम है। अमेरिका में आबादी कम और बिखरी हुई है इसलिए उन्हें यंत्रों की आवश्यकता हो सकती है। भारत को यंत्रों की आवश्यकता नहीं हो सकती। जिस देश में लाखों मजदूर बेकार पड़े हों, वहां श्रम से बचने के साधनों के बारे में सोचना बेकार है। अगर कोई व्यक्ति ऐसा यंत्र बनाए ताकि, खाने में हमारे हाथ तनिक भी कष्ट न करें तो खाने का मजा ही क्या आएगा, उल्टी परेशानी हो जाएगी। हमारी गरीबी का कारण हमारे पुराने उद्योगों का खत्म होना है और इसका परिणाम हुआ बेरोजगारी।

भारत में हम लोग बहुत भाग्यशाली हैं कि हमारे बीच महात्मा गांधी जैसे प्रखर चिन्तक हुए हैं, जिन्होंने हमें बहुत-सी नई बातें सिखाईं और अन्त्योदय के नाम से एक नया सिद्धान्त दिया। उनका मत था कि सभी विकास के कार्यक्रमों की उपयोगिता का मापदण्ड एक ही बुनियादी सिद्धान्त होना चाहिए यानी कि क्या किसी योजना से सबसे गरीब आदमी को भी वास्तविक फायदा हो सकता है अथवा नहीं। इस अन्त्योदय सिद्धान्त के अन्तर्गत यदि हम सभी विकास योजनाओं को ला सकें तो तभी हम ग्राम-विकास की ऐसी स्वतः पुनरावृत्ति पद्धति का विकास कर सकते हैं, यानी जिससे रोजगार मिलने का एक अनवरत क्रम गांवों के अन्दर स्वतः चलता रहे।

महात्मा गांधी ही केवल एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने गांवों की हालत की असल व्याधि को ढूंढ निकाला और उन्होंने बताया कि वृद्धि और [illegible] दोनों में पटरी न बैठने के कारण लाखों लोग निराशा और नीरसता का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। नवें लाल बहादुर शास्त्री स्मारक व्याख्यान माला (नई दिल्ली, जनवरी 1977) में बोलते हुए प्रोफेसर पी. वी. एम. सुखात्मे ने भारत में अल्पपोषण के कारणों का जायजा दिया है। उनके अनुसार हमारे देश में लगभग 10 करोड़ लोग ऐसे हैं, जोकि मुद्दत से अल्पपोषण के शिकार हैं और निर्धन हैं। उनमें से अधिकतर लोग मजदूर हैं जिनके पास या तो बहुत कम जमीन है या करीब-करीब है ही नहीं और वे अपना गुजारा यदाकदा मजदूरी का काम मिलने पर कर पाते हैं। उन्होंने आगे यह भी बताया कि ऐसे लोग पर्याप्त भोजन न मिलने के कारण अपनी पूरी क्षमता से काम नहीं कर पाते और विशेषतः इन लोगों को ही बीमारियों और प्राकृतिक आपदाओं का सामना करना पड़ता है और ये लोग अच्छा रोजगार न मिलने के कारण बड़ा खतरनाक जीवन बिताते हैं। इन लोगों को उस दाम पर खाना भी तो नहीं मिलता जो दाम ये लोग दे सकते हैं। यह दुखद अवस्था अन्न भंडार के बढ़ने के संदर्भ में तो और भी ज्यादा बुरी है। एक तरफ तो हमें खाद्यान्नों की पर्याप्त भण्डारण व्यवस्था करने में कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है तो दूसरी तरफ हम उत्पादनशील रोजगार के द्वारा गांव के गरीबों की क्रय क्षमता को बढ़ाकर कुपोषण दूर करने में असमर्थ हैं।

अन्त्योदय

इस दुविधा का सामना करने के लिए आवश्यक है कि राजनीतिक संकल्प और व्यावसायिक दक्षता को मिल-जुल कर कारगर ढंग से काम में लाया जाए और तत्काल ही इस दिशा में क्रांति की जाए। गांवों के क्रांतिकारी परिवर्तन में यहीं पर व्यावसायिक वैज्ञानिकों और प्रौद्योगिक विदों को महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करने का सवाल उठता है। इन लोगों का पहला काम है कि वे किसी ग्राम्य क्षेत्र को चुन लें और उसकी विकास सम्बन्धी लेन-दारी और देनदारी का वैज्ञानिक जायजा तैयार करें। इस वैज्ञानिक लेखे-जोखे के विश्लेषण से उनको यह मालूम होगा कि वहां विकास करने के कौन से अवसर हैं और कौन सी परेशानियां हैं, जिनको दूर किया जाना है। इसके बाद दूसरा कदम यह है कि वे विकास के इन अवसरों को वहां के स्थानीय लोगों, बैंकरों तथा प्रशासकों की सलाह-मशवरा से आर्थिक

रूप से योजना प्रायोजनाओं में तब्दील करें। इसी तरह कुपोषण पर विचार करना अपेक्षित है। सरकार और स्वयं सेवी संस्थाओं को गांव के गरीबों की क्रयशक्ति को बढ़ाने वाली प्रतियोजनाएं तत्काल क्रियान्वित करने के लिए हाथ में लेनी चाहिए। यह तभी हो सकता है यदि विभिन्न परियोजनाओं को विज्ञान की विविध शाखाओं को ध्यान में रखकर तैयार किया जाये और आर्थिक तथा पारिस्थितिकी पर आधारित विश्लेषण किया जाए। गांव के खुशहाल लोगों को तो उनकी अपनी ही सूझ-बूझ पर छोड़ा जा सकता है। गांव के गरीब आदमियों की भलाई के लिए प्राथमिकताओं की नई प्रणाली तैयार करने के लिए हमें पुरानी घिसी-पिटी पद्धति से हटने का प्रयत्न करना चाहिए।

वैज्ञानिक साधनों की उपयोगिता संबंधी नीतियों पर आधारित रोजगार देने के कार्यक्रमों को दो प्रमुख भागों में विभाजित किया जा सकता है:

(क) विकास परियोजनाओं के माध्यम से सरकार द्वारा रोजगार के अवसर पैदा करना, और

(ख) अपनी सहायता आप करने और सामूहिक पहलू पर आधारित परियोजनाओं के माध्यम से रोजगार दिलाना।

निकट भविष्य में, सिंचाई, पेयजल की सप्लाई और संचार साधनों के विशाल कार्यक्रमों को हाथ में लेकर सरकार गांव के मजदूरों को कम से कम मजदूरी पर रोजगार दिलाने में सहायता दे सकती है। इन क्षेत्रों में रोजगार की अधिक गुंजाइश है। वर्तमान विकास कार्यक्रम में राष्ट्रीय सिंचाई योजना के अन्तर्गत बड़ी और छोटी सिंचाई के अन्तर्गत और पांच करोड़ हैक्टेयर भूमि को छोटी सिंचाई प्रायोजना के अन्तर्गत लाने का प्रावधान है। ऐसे बुनियादी संरचना-आधार के विकास के फलस्वरूप रोजगार की संभावनाएं बढ़ेंगी, क्योंकि इनमें बहुफसली खेती और मिलवां खेती के लिए ज्यादा आदमियों की जरूरत पड़ेगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में संचार के साधनों के विकास और गांव में पेयजल की सप्लाई के लिए, सरकारी योजनाओं द्वारा गांव के लोगों की क्रयशक्ति को बढ़ाने में मदद मिलेगी और इस प्रकार गांव का संरचना आधार विकसित होगा।

ट्राइसेम कार्यक्रम के अधीन प्रशिक्षणार्थी मद्रास संगम में दर्जीगीरी का प्रशिक्षण लेते हुए

सब को रोजगार

दीर्घावधि में अधिक रोजगार मुहैया करने का वास्तविक हल अपनी सहायता आप करने और सामूहिक पहलू पर आधारित योजनाओं से मिल सकता है। हमारे जैसे देश में जहां का सामाजिक संगठन और भारी जनशक्ति जैसी विशेषताएं हैं वहां इस प्रकार की प्रतियोजनाओं का विशेष महत्व है। शायद इस दिशा में हमें रोजगार दिलाने के कार्यक्रमों को विकसित करने के लिए कुछ बुनियादी दिशा-निर्देश के बारे में सोचना होगा।

(क) उपयुक्त प्रौद्योगिकी अपनाकर मानव शक्ति को विशेष उत्पादकता में परिवर्तन करना, जीवन की ऊबा देने वाली नीरसता को समाप्त करना और देश के विभिन्न भागों में फैली हुई उपलब्ध उच्चकोटि की कला का बेहतरीन इस्तेमाल करना।

(ख) गांव में श्रम शक्ति के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका को विशेष मान्यता मिलनी चाहिए। कृषि विस्तार कार्यक्रमों को ऐसा बनाया जाए ताकि महिलाओं तक यथासंभव उनकी पहुंच हो सके और साथ ही कृषि पर आधारित उद्योग इस तरह अपनाए जाएं कि उनसे अंशकालीन रोजगार और घर पर ही होने वाला धन्धा मिल सके।

(ग) दिन भर काम कर आमदनी करने के उत्तरदायित्व से बच्चों को मुक्त करना चाहिए ताकि बच्चे स्कूल जा सकें।

(घ) भूमिहीन मजदूरों को उत्पादन इकाइयों के मालिक बनने में मदद दी जाए। धीरे-धीरे भूमि सबसे अधिक अमूल्य सम्पत्ति बन जाएगी। यह तो लगभग असंभव है कि हर आदमी के पास पर्याप्त जमीन हो जाए। इसीलिए पशुपालन, मछली पालन और गांव के उद्योगों को भूमिहीन लोगों द्वारा वैकल्पिक व्यवसायों के रूप में विकसित करना होगा। उदाहरण के लिए, भारत की समुद्रतट की लम्बाई लगभग छः हजार किलोमीटर है और इस पर लगभग 35 लाख मछुआ परिवार गुजर करते हैं। जब वैज्ञानिक ढंग से मछली पालन और मछली पकड़ने का काम विकसित किया जाएगा तो रोजगार की क्षमता काफी बढ़ जाएगी। यह तत्काल निर्णय करना जरूरी है कि भूमिहीन मजदूरों को समुद्री मछली पालन के लिए कुछ समुद्री जगह देने में प्राथमिकता मिलनी चाहिए। तटवर्ती खुशहाल लोगों के लिए नई बस्तियों में मछली पालने के साथ-

साथ काजू और नारियल की बागवानी करने की व्यवस्था हो सकती है।

(च) बुद्धि और श्रम का तालमेल बढ़ाने के लिए सभी शैक्षणिक, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक संस्थानों को सुनिश्चित उत्तरदायित्व सौंपे जाने चाहिए ताकि वे चुने हुए क्षेत्रों में विकास का रूप-रेखा तैयार कर सकें और उस क्षेत्र के लोगों की सलाह से ऐसी परियोजनाएं तैयार कर सकें जो भली-भांति चल सकें।

आर्थिक व्यवस्था की काया पलट

समन्वित ग्रामीण विकास पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा गठित एक दल ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था सम्बन्धी वैज्ञानिक सुधार के लिए निम्नलिखित मार्ग-दर्शक सिद्धान्त रखे हैं:

(क) कार्य योजनाओं में प्राथमिकता, गरीबों विशेष रूप से भूमिहीन मजदूरों, बहुत छोटे किसानों, शिल्पियों, महिलाओं और बच्चों के लिए लाभकारी रोजगार और क्रयशक्ति बढ़ाने वाले साधन जुटाने चाहिए।

(ख) साधनों के वैज्ञानिक उपयोग की नीतियों के आधार पर रोजगार मुहैया करने के कार्यक्रम तैयार करने चाहिए।

(ग) इन कार्यक्रमों को अमल में लाने का तरीका बहुत सीधा और आर्थिक रूप से चलने वाला होना चाहिए ताकि उन कार्यक्रमों द्वारा जल्दी ही आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सके।

(घ) इन कार्यक्रमों में सबसे अधिक बल दिया जाना चाहिए मानव शक्ति पर, जोकि सभी साधनों में सबसे अधिक अनमोल है और जिसका कारगर उपयोग किया जाना चाहिए।

इस बात पर जोर दिया गया है कि इन कार्यक्रमों का ढांचा लचीला हो बल्कि प्रत्येक कार्य योजना को ऐसा बनाया जाए ताकि वह स्थानीय आवश्यकताओं, साधनों के अनुरूप हो और इस बात का ध्यान भी रखा जाए कि स्थानीय लोग उनमें शरीक हो सकें।

योजना को निम्न प्रकार से तीन चरणों में बांटा गया है:—

1. एक समेकित साधन सूची तैयार की जाए जिसमें प्राकृतिक साधनों, संरचना और गांव के गरीब लोगों द्वारा उस योजना में भाग लेने का विवरण हो।

2. मांग की कमियों को दूर करने के लिए विश्लेषण किया जाए जिसमें मुख्य क्रांतिकारी कदमों का उल्लेख हो।

ये दस्तकार कितने ध्यान से अपने काम में व्यस्त हैं

3. स्थानीय लोगों की सहायता से तैयार किए गए कार्य योजना के मसौदे की जांच की जाए और अन्त्योदय का लक्ष्य मानकर परीक्षण के आधार पर कार्यक्रम चुने जाएं।

यहां कुछ ठोस सुझावों को पेश करना उपयोगी होगा। उदाहरण के लिए, तमिलनाडु के धान उगाने वाले तंजौर जिले में कावेरी नदी के डेल्टा में भूमिहीन मजदूरों और छोटे किसानों के लिए अतिरिक्त आमदनी और रोजगार मुहैया करना सम्भव है और यह काम कटाई के बाद वाली प्रौद्योगिकी के पैकेज कार्यक्रमों को अपना कर किया जा सकता है। इस कार्यक्रम में धान के भूसे के साथ यूरिया और शीरा मिलाकर मवेशियों और बकरियों का पोषक आहार तैयार किया जा सकता है। धान की भूसी से तेल निकाला जा सकता है। तेल निकाली हुई खली और भूसे का इस्तेमाल किया जा सकता है। अन्तःस्थलीय तालाबों में मछली उत्पादन के काम की बहुत गुंजाइश है और इन्हें पूरी तरह इस्तेमाल किया जाना चाहिए, साथ ही चारा बैंक, मछली जीरा बैंक और सहकारी सेवा संस्था की स्थापना कर उपयुक्त पशुपालन कार्यक्रमों का गठन किया जाना चाहिए। प्रमुख अनाज पर आधारित कृषि प्रणाली में यह दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है।

रोजगार मुहैया करने के लिए लघु उद्योगों, खादी और ग्रामोद्योग, हथकरघा, रेशम के कीड़े पालने आदि की विस्तृत सूची है। यह आवश्यक है कि आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए जल्दी ही इन गतिविधियों में मदद की जाए और दी जाने वाली सहायता सीमित मात्रा में ही मुहैया की जाए फिर भी इन कामों की वास्तविक सफलता निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातों पर निर्भर है:

(क) ठीक किस्म की और किफायती दामों पर कच्चे माल की बराबर सप्लाई (ख) उपभोग की मांगों में परिवर्तन के अनुरूप डिजाइनों की व्यवस्था (ग) तैयार माल की क्वालिटी की कठोर जांच, और (घ) उत्पादन विपणन समितियों का संगठन ताकि उन्हें लाभ का अधिकतम भाग मिल सके।

सुन्दर वस्तुएं

इस बात के लिए विशेष प्रयत्न किया गया है कि हमारे अनुसंधान वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में विकसित प्रौद्योगिकी को व्यावहारिक परियोजनाओं के विकास

में बेहतरीन इस्तेमाल करने का सुझाव दें। पर इन योजनाओं को आर्थिक दृष्टि से चल सकने वाला और पुनरावृत्ति के योग्य होना चाहिए। वैज्ञानिकों ने कुछ नए विचार दिए हैं जिनमें जिरेनियम तथा पायरेथ्रम को व खुम्बियों को उगाना, स्थानीय और नस्ली बकरियों का सुधार, नारियल की दोबारा पौध लगाने का व्यवस्थित कार्यक्रम और साथ ही उनके बीच में दूसरी फसलें उगाने का कार्यक्रम और मिलवां फसलें, ताजे पानी के जलाशयों में और धान के खेतों में मछलियां पालने की योजना और समुद्री मछली पालन पर आधारित औद्योगिक बस्तियों का विकास। स्वर्गीय प्रोफेसर शुमाचर की धारणा है कि छोटी चीज खूबसूरत होती है, इसमें वैज्ञानिकों और औद्योगिकविदों की दिलचस्पी पैदा करना एक उद्देश्य है। छोटी पुनरावृत प्ररियोजनाओं के कार्यान्वयन करने और डिजाइन तैयार करने से हमारे समाज के सबसे गरीब वर्ग को लाभ हो सकता है और इससे ही समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम का आम लोगों के आन्दोलन के रूप में विकास हो सकता है।

कार्यक्रम की सफलता मुख्य रूप से योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए नियुक्त कर्मचारियों की योग्यता पर निर्भर है। प्ररियोजना क्षेत्र में थोड़े से स्थायी कर्मचारी होते हैं, उनके अलावा कुछ विशेषज्ञ कर्मचारी भी होने चाहिएं जोकि विशेष अल्पावधि कार्यों को हाथ में ले सकें। ग्राम-विकास के क्षेत्र में युवा व्यवसायविदों का एक ग्राम-साधन-दल बनाने की बहुत गुंजाइश है। इस दल में वे लोग शामिल किए जाएं जो ग्रामीण क्षेत्रों में कम से कम दो तीन साल की अवधि के लिए सेवा करने का व्रत लें। अनुभव से यह पता चला है कि अनेक ऐसे युवक हैं जिनमें आदर्श और गतिशीलता का माद्दा है और जो अपने नियमित व्यवसाय में घुसने से पहले ग्राम विकास के क्षेत्र में कुछ समय तक काम करना चाहते हैं। इस प्रकार कुछ सुनिश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए डाक्टर, इंजीनियर, कृषि वैज्ञानिक, पशुचिकित्सक, सामाजिक और गृह विज्ञानी तथा अन्य लोग व्यावसायिक दक्ष लोगों के रूप में सहायता दे सकते हैं।

देश की बेरोजगारी एक भयंकर समस्या का रूप लेती जा रही है। अतः इसका समाधान तत्काल होना बहुत आवश्यक है अन्यथा यह असंतोष कोई भी रूप ले सकता है। इसलिए सबसे पहले हमें अपने देश में रोजगार को बढ़ाने पर जोर देना होगा। यह बात आज भी उतनी ही सच है जितनी की आज से 50 साल पहले।

माचिस बनाने का प्रशिक्षण लेती हुईं आदिम जाति की लड़कियां

राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम

काम के बदले अनाज योजना काफी पहले बनाई गई थी और 1 अप्रैल, 1977 से उसे लागू किया गया था। इस योजना का उद्देश्य यह था कि अतिरिक्त अनाज की सहायता से देहाती क्षेत्रों में रोजगार के अतिरिक्त अवसर प्रदान किए जाएं। अब इस योजना को नया रूप दिया गया है और इसे राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम के नाम से चलाया जा रहा है।

काम के बदले अनाज कार्यक्रम एक साल से दूसरे साल तक तदर्थ आधार पर चलाया जा रहा था और उसके अन्तर्गत परियोजनाओं की स्वीकृति भी तदर्थ आधार पर दी जाती थी। लेकिन राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम को पंचवर्षीय योजना का अभिन्न अंग बना दिया गया है और इसके अन्तर्गत सहायता प्राप्त करने के लिए राज्य सरकारों को सम्बद्ध क्षेत्रों की वास्तविकता के आधार पर परियोजनाएं पहले से ही तैयार करनी होंगी।

चालू वर्ष में इस कार्यक्रम के लिए बजट में 3 अरब 40 करोड़ रुपये रखे गए हैं। कुल 21 लाख टन अनाज उपलब्ध होगा। इससे पिछले कार्यक्रम में मजदूरी पूरी तरह नगद दी जाती थी जबकि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्यों को मजदूरी का एक अंश नगद देने के लिए 22 करोड़ रुपये दिए गए हैं। इस वर्ष 70 करोड़ रुपये सीमेंट, इस्पात आदि वस्तुएं खरीदने के लिए रखे गए हैं जिससे देहाती क्षेत्रों में स्थायी परिसम्पत्तियों का निर्माण हो सके। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए ठेकेदारों से कोई सहायता नहीं ली जाएगी। कार्यक्रम के अन्तर्गत कुल साधनों में से 10 प्रतिशत के वनरोपण, चारा उगाने, आदि के लिए तथा 2 प्रतिशत अनुसूचित जातियों, जनजातियों के प्रत्यक्ष लाभ के कार्यों के लिए रखा गया है। □

एस. के. सक्सेना
पी-12, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032

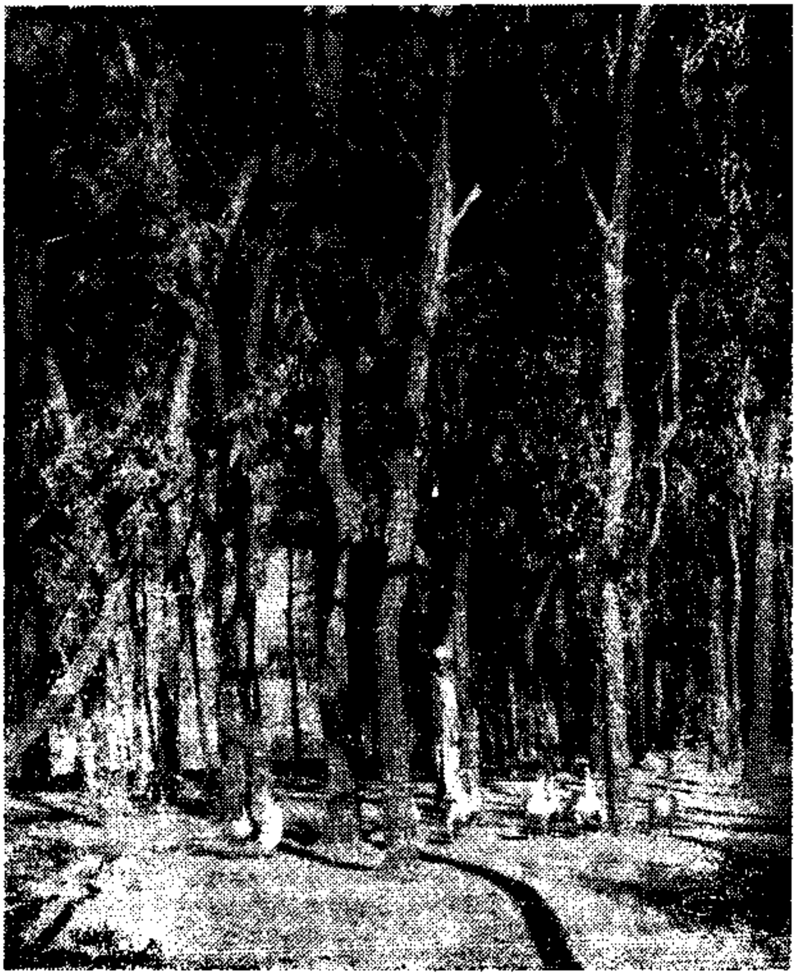

कश्मीर का विलो वृक्ष वन

सुनो हमने कश्मीर में भी हिमालय की कराह

सुन्दरलाल बहुगुणा

कश्मीर का नाम लेते ही उस प्रख्यात फारसी शेर की याद आ जाती है, जिसका अर्थ है, "अगर धरती पर कहीं स्वर्ग है तो यहीं है, यहीं है, यहीं है।" इसलिए लोग कश्मीर जाते हैं सैर-सपाटे के लिए, प्राकृतिक सौंदर्य का रसास्वादन करने के लिए, गरमियों में मैदानों की लू से बचने के लिए, तो जाड़ों में बर्फ पर स्कीइंग (स्कीटिंग) करने के लिए।

यातायात के साधनों के विकास के साथ-साथ कश्मीर जाने वाले सैलानियों की संख्या भी तेजी से बढ़ी है। मैं सोलह वर्ष पहले जब पहली बार बस से श्रीनगर जा रहा था, तो ज्यों ही बनिहाल दर्रे को पार कर हमने घाटी में प्रवेश किया और वहां के अपूर्व सौंदर्य का दृश्य देखा, ठंडी-ठंडी स्फूर्तिदायक बयार में सांस ली, तो उसी बस में बैठे हुए एक सेठजी प्रफुल्लित होकर बोल उठे, "वह सौभाग्य मुगल बादशाहों को भी प्राप्त नहीं हुआ होगा, जो हमें केवल अट्ठाईस रुपये देकर मिल रहा है।" (उस समय पठानकोट से श्रीनगर तक आने-जाने का भाड़ा इतना ही था। अब तो सामान्य बसों में भी लगभग सतहत्तर रुपये और विशेष सुविधा वाली आरामदेह बसों में तो सौ रुपये हैं।)

पर मुझे लगा, कश्मीर की यात्रा सुलभ होने के साथ-साथ कश्मीर की सुन्दरता विलुप्त हो रही है। गुलमर्ग और पहलगांव दो अति सुन्दर पर्यटन-स्थल माने जाते हैं। हम गुलमर्ग की ओर जाते हैं। कुछ वर्ष पहले तक केवल टनमर्ग तक ही मोटर जाती थी। वहीं से घाटी समाप्त होकर सघन देवदार, कैल और फर के वनों से आच्छादित पहाड़ियां प्रारम्भ होती हैं। अब गुलमर्ग तक की 400 मीटर की ऊंचाई (गुलमर्ग की कुल ऊंचाई 2,700 मीटर है) तय करने के लिए पगडंडी के स्थान पर घुमावदार मोटर-सड़क बन गयी है। इस सड़क पर फर्राटे से दौड़ती हुई मोटर-गाड़ियां आधे घंटे में चोटी पर पहुंचा तो देती हैं, परन्तु रास्ते में दिखाई देते हैं सड़क-निर्माण के दौरान काटे हुए पेड़ों के ठूंठ। मुझ जैसे पर्वत-पुत्र की आंखों के लिए यह वीभत्स दृश्य असह्य है।

गुलमर्ग चोटी पर स्थित है लंबा-चौड़ा मखमली घास का मैदान। बर्फ पिघलने के बाद यहां घास उग आती है। इसके "बुग्गी" की तरह नरम होने के कारण गढ़वाल में ऐसे मैदान को "बुग्याल" कहते हैं। बुग्याल पहाड़ी धरती का मखमली परिधान है और उस पर खिल उठते हैं रंग-बिरंगे छोटे-छोटे फूल। इन फूलों के कारण ही इस स्थान का नाम फूलों (गुल) का मैदान (मर्ग) पड़ा होगा। परन्तु अब फूल तो कहीं दिखाई नहीं देते। हां, बहुत ज्यादा लोगों के चलने के कारण, बूटों से रौंदी हुई घास के बीच में नंगी धरती अवश्य दिखाई देती है। वनस्पति-विज्ञान के दो विद्यार्थी यहां पर पहले जो वनस्पतियां मिलती थीं उनकी खोज में घूम रहे हैं। परन्तु उनमें से कई वनस्पतियां लुप्त हो गयी हैं और शेष मर रही हैं।

पुराने गुलमर्ग की याद दिलाने वाले गूजर-परिवार अपनी भेड़ों के साथ इस विस्तृत मैदान में दिखाई देते हैं। घोड़े

भी मौजूद हैं, जो पहले टनमर्ग से वहां तक सैलानियों को लाते थे और अब खिल्लनमर्ग तक ले जाते हैं। कुछ लोग घास पर लेटे-लेटे आनन्द ले रहे हैं पहाड़ी धूप का। इतनी ऊंचाई पर बहने वाले नाले के कल-कल निनाद के साथ पक्षियों का कलरव स्वर मिला रहा है। मनुष्य, पशु-पक्षी और जंगल जब स्वाभाविक स्थिति में एक दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक रहते हैं, तो प्रकृति अपने पूरे वैभव के साथ दर्शन देता है। शायद इसी को देखकर वेदांती संत स्वामी तपोवनजी को प्रकृति में ईश्वर-दर्शन की अनुभूति हुई होगी। परन्तु अब तो गुलमर्ग में सैलानियों की भीड़ है। वे "लिफ्ट-चेयर" (बिजली से रज्जुमार्ग द्वारा ऊपर ले जाने वाली डोली) पर बैठने के लिए क्यू लगाकर खड़े हैं। गुलमर्ग में कुछ स्थायी आबादी के अलावा सैलानियों की सेवा के लिए बड़े-बड़े होटल बन गए हैं। इन होटलों में प्रतिदिन कई टन लकड़ी जलती है। उसके लिए पेड़ कट रहे हैं और गुलमर्ग का सौंदर्य उजड़ रहा है, मौसम बदल रहा है।

श्रीनगर का मुख्य आकर्षण डल झील है। परन्तु प्रख्यात वनस्पतिशास्त्री डा. पी. काचरू की चिंता का विषय है-डल झील का प्रदूषित होना, गाद से भरना और सिमटकर छोटा होना। डल झील के चारों ओर तथा झेलम के किनारे बढ़ते हुए शिकारों, किश्तीनुमा मकानों की सारी गंदगी पानी में मिल रही है। इसका मछलियों पर प्रभाव पड़ रहा है। जब श्रीनगर के चारों ओर की पहाड़ियां, जो अब गंजी हो गयी हैं, हरी-भरी रही होंगी, डल झील में शुद्ध और स्वच्छ जल आता होगा। अब तो वर्षा होते ही गाद आने लगती है। डल को बचाने के लिए उसके चारों ओर एक पक्की मोटर-सड़क का निर्माण करने की योजना है। पर यह भी एक नया अतिक्रमण होगा।

परन्तु हम मौज-मजे के लिए घूमने वाले सैलानी न थे। हम तो हिमालय और उसके निवासियों की वेदना से व्यथित सेवक थे, उत्तराखंड के पहाड़ों में कई वर्षों तक लगातार घूमते हुए इस वेदना की जो अनुभूति हुई थी और उसे दूर करने के लिए "चिपको" आंदोलन का जो नवनीत मिला था, उसे लोगों के साथ बांटने के लिए आए हुए पदयात्री थे। जब मैंने हिमालयवासियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने के लिए कश्मीर से कोहिमा तक की पैदल यात्रा का संकल्प प्रकट किया था तो कई मित्रों ने इसे पागलपन बताया था, कई ने उपहास किया था। जो हमदर्द थे उन्होंने कहा था, "जाना ही है तो मोटर से जाओ।" परन्तु प्रवाह के विरुद्ध चलने वाले की सबसे बड़ी उपलब्धियां तो उपहास, उपेक्षा, अलगाव और अपमान हैं। 30 मई को श्रीनगर के पर्यटक-केंद्र से पीठ पर अपना सामान लादे हुए निकल पड़े थे। हमारे साथ एक बैनर था, जिस पर लिखा था:

दरख्त (वृक्ष) बचाओ, इन्सान बचाओ।।

श्रीनगर से जम्मू की ओर जाने वाले व्यस्त राष्ट्रीय राजमार्ग पर पागलों की यह टोली आगे बढ़ रही है। मनुष्यों को लेकर चलने वाली मोटर-गाड़ियों के अलावा उनके लिए उपभोक्ता वस्तुएं लाने वाहनों की संख्या भी कम नहीं है। भेड़-बकरियों तथा जलाऊ लकड़ी से लदे हुए ट्रक हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। कश्मीर में प्रतिदिन हजारों बकरे कटते हैं। जम्मू में सन् 1976 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार, दस साल में बकरों और भेड़ों की संख्या दस गुनी हो गयी थी। गूजर-बक्कर वालों का मुख्य व्यवसाय ही यह है। वे जाड़ों में घाटियों की ओर और गरमियों में चोटियों की ओर अपने गल्ले को लेकर चले जाते हैं। पहाड़ों में अवश्य ही पहले से भेड़-बकरियों का पालन होता रहा है; परन्तु भेड़ें मुख्यतः ऊन के लिए होती थीं और बकरियां बोझ ढोने के लिए। अब बोझ ढोने के लिए तो बकरियों की उपयोगिता रह नहीं गयी, पर मांस के लिए उनकी मांग बढ़ती जा रही है। मांस की आवश्यकता पूरी करने के लिए कश्मीर पड़ोसी राज्य हिमाचल प्रदेश से भी भेड़-बकरियों का आयात करता है।

इसी प्रकार जलाऊ लकड़ी की मांग भी बढ़ती जा रही है। श्रीनगर में सरकार प्रतिवर्ष 15 लाख मन जलाऊ लकड़ी रियायती मूल्य पर बेचती है। (मई से पहले यह मूल्य 2 रुपये 60 पैसे प्रति मन था, अब 4 रुपये 52 पैसे प्रति मन है)। अनंतनाग, बारामूला और घाटी के अन्य नगरों के लिए भी यही व्यवस्था है।

शहरों की बढ़ती हुई ईंधन की मांग का गांवों पर क्या असर पड़ रहा है, यह तो हम श्रीनगर से लगभग 60 कि.मी. आगे अकिन गांव में देख सके। गांवों के निकट सर्वत्र कैल और देवदार के पेड़ों की केवल चोटियां शेष थीं, शाखें कट गयी थीं। इसका कारण बताते हुए अवकाश-प्राप्त गिरदावर जियालाल पंडित ने हमसे कहा, "इन्हें लोगों ने ईंधन के लिए काटा है। पहले गांवों की ईंधन की जरूरत जंगलों में गिरी-पड़ी सूखी लकड़ियों से पूरी हो जाती थी। अब वे शहरों में चली जाती हैं। इसके अलावा, विलो (बेंत) के पेड़ हमारे निजी होते थे। उनसे भी ईंधन मिलता था। मकान बनाने के लिए सफेदा की लकड़ी का उपयोग करते थे।" हमने कहा, "बेंत और सफेदा के पेड़ तो अब भी बहुत हैं।" उनका उत्तर था, "अब बेंत के पेड़ खेल-कूद की सामग्री बनाने और सफेदा के पेड़ सेब की पेटियों के लिए हैं।" अवंतीपुरा और वृजबिहारा के बीच हमने सड़कों पर प्रदर्शन-बिक्री के लिए रखे हुए क्रिकेट के बैट देखे थे। उनके पीछे ही थीं छोटी-छोटी आरा-मशीनें। जब अनिवार्य आवश्यकताओं के ऊपर मौज-मजे की चीजों को प्राथमिकता मिलने लगती है, तो वनों के निकट रहने वाले लोग ही पर्यावरण को संतुलित रखने के बजाय उसे बिगाड़ने वाले बन जाते हैं।

दूसरी ओर, मकान और फर्नीचर बनाने के लिए लकड़ी की मांग बढ़ती जा रही है। सन् 1947 में कश्मीर के जंगलात की आय केवल 85 लाख रुपये थी; इस वर्ष उसके 40 करोड़ रुपये तक पहुंचने का अनुमान है। इतनी तेजी से यह वृद्धि क्यों हो रही है? इसका उत्तर हमें कश्मीर घाटी से 12,414 फुट ऊंचा सिमथन दर्रा पार करते ही मिल गया। यहां से चेनाब की घाटी प्रारंभ होती है। सिमथन से चेनाब का सहायक सिमथन नाला निकलता है। ठाठरी में यह हिमाचल प्रदेश के लाहौल-स्पिति क्षेत्र आने

वाली चेनाब से मिलता है। और भी कई नाले चेनाब में मिलते हैं। जहां-जहां भी दो नाले मिलते हैं--जैसे सिगड़ी, ठाठरी, ढिटपट्ट--सर्वत्र कटी हुई लकड़ियों के अंबार लगे थे। ऐसा लगता था कि नदी-नाले और ट्रक तो पहाड़ी में केवल लकड़ी का निर्यात करने के लिए ही हैं।

वन-ठेकेदार, वन-निगम मय पूरी शक्ति से पेड़ों की कटाई करने और उन्हें स्लीपरों में बदलने में व्यस्त हैं। ठेकेदारों की तीसरी पीढ़ी इस समय यहां के वनों में विध्वंस-रत है। सड़कों के विस्तार के साथ-साथ वन-दोहन का क्षेत्र भी बढ़ता जा रहा है। घने वनों के बीच चिरान के लिए आरा-मशीनें लगायी गयी हैं। उन तक लट्ठों को लुढ़काकर पहुंचाने के लिए कुछ दूरी तक जंगल की सफाचट हजामत कर दी गयी है। जहां से लकड़ी बाहर पहुंचाने में नाले और सड़कें असमर्थ हैं। वहां रज्जुमार्ग लगाए गए हैं। चेनाब घाटी में एक स्थान पर आठ कि. मी. लंबा रज्जुमार्ग है।

पहाड़ों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विकास-कार्य मोटर-सड़कों का निर्माण मान लिया गया है। आबादी वाले क्षेत्रों में तो पहले ही मोटर-सड़कें बन गयी थीं, अब जन-शून्य क्षेत्रों में मोटर-सड़कें तेजी से बन रही हैं। चिनगांव से डकसुम के बीच 72 कि.मी. को जो सड़क बन रही है, उस पर कोई गांव नहीं पड़ता। यह 12,414 फुट ऊंचे दर्रे से गुजरेगी। साल में कई महीनों तक यह बर्फ के नीचे और उसके बाद बरसात के मलबे से ढंकी रहेगी और साल में मुश्किल से दो महीने काम देगी। इसके पीछे एक ही ध्येय है--इस घाटी के बचे-खुचे वनों का दोहन। ये वन पहले ही बर्फीले तूफानों से और बर्फ के बोझ से क्षतिग्रस्त हो गये हैं। सन् 1979 के बर्फीले तूफान में इतने पेड़ गिर गए कि जम्मू-कश्मीर राज्य के मुख्य अरण्यपाल श्री मोहन सिंह के अनुसार, अगले छह वर्षों तक नए पेड़ काटने की गुंजाइश नहीं है।

पर्वतीय वनों के तीन पापग्रह--व्यापार-प्रधान वन-प्रबंध, सड़क-निर्माण और प्राकृतिक प्रकोप अपनी पूरी शक्ति पर हैं, क्योंकि लालची शासन-तंत्र उनकी पीठ पर है। जहां एक बार पेड़ कट गए, वहां उनका पुनर्जनन असंभव है। ऊंचे स्थान के वनों में तो यह कतई नहीं है।

लगभग सौ वर्ष पूर्व वन-विहीन की गयी चेनाब की घाटी का निचला प्रदेश रेगिस्तान में बदल गया है। इस क्षेत्र के कई गांवों में पानी का संकट है। यह कितनी हास्यास्पद बात है कि जिस चेनाब पर तीन अरब रुपयों की लागत से विशाल सलाल बांध बन रहा है, उसकी घाटी में मनुष्य और पशु पानी के लिए तरसते हैं। लाहौल में चेनाब का उद्गम प्रदेश तो पहले ही एक शीत रेगिस्तान है। नीचे के क्षेत्र में रेगिस्तानी परिस्थितियां तैयार हो रही हैं। बीच के क्षेत्र में कट रहे सघन पेड़ों को देखकर बार-बार आशंका प्रकट करते हैं कि जम्मू-कश्मीर के अवशेष वनों का तो अभी दोहन नहीं हो सका है।

दोहन कि शोषण ?

कश्मीर में प्रकृति ने अपनी देनें मुक्तहस्त से बिखेर दी थीं। पांच हजार फुट की ऊंचाई पर अर्धचंद्राकार समतल घाटी, झीलें और सरिताएं तथा चारों ओर से पहाड़ियों पर मिट्टी बनाने और पानी को संरक्षित करने वाले सघन वन-मिट्टी और पानी अनादि काल से प्राणिमात्र के जीवन के मुख्य आधार रहे हैं। ये हमारी मूलभूत पूंजी हैं। यह सत्य आज से छह सौ वर्ष पहले इस घाटी में पैदा हुए एक संत नुंद ऋषि (शेख नूरुद्दीन) ने इन शब्दों में प्रकट किया था-"येली वन पोषन, तेली पोषी अन" (जब तक वन रहेंगे, तब तक अन्न भी रहेगा)।

नुंद ऋषि के वचन अब भी लोकगीतों के साथ जोड़कर गाए जाते हैं। जब हम घाटी को पार कर रहे थे, तो रास्ते के दोनों ओर धान के खेतों में रोपाई करती हुई स्त्रियों के मधुर कंठ से इन गीतों के स्वर फूट रहे थे। पर हमने देखा कि धान के खेत जहां समाप्त होते हैं, वहीं से अखरोट, बादाम और सेब के बागीचे प्रारंभ हो जाते हैं, फिर उसके बाद हैं नंगे पहाड़ या हैं मक्का की खेती के लिए खोदी गई ढालदार जमीन। बारिश होते ही इनकी मिट्टी बह-बहकर नालों का रंग लाल कर देती है। कश्मीर की समृद्धि के पीछे छिपी हुई धरती माता की यह वेदना हम महसूस कर सके। यह लाल मिट्टी वाला पानी धरती का लहू और मांस है। धरती तो मां है, मानवधर्म के अनुसार उसमें जब तक जान रहेगी वह बच्चों का लालन-पालन करती रहेगी। परंतु धरती मर रही है, इस कटु सत्य को अब हमें समझ लेना चाहिए।

हम कश्मीर को पार कर हिमाचल की ओर बढ़ रहे हैं। बरसात के दौरान नदियों में बहने वाले धरती के लहू-मांस को देखते रहने लायक कड़ा दिल हमारे पास नहीं है। इसलिए बरसात के बाद पुनः चंबा (हिमाचल प्रदेश) से पदयात्रा प्रारंभ करेंगे। □

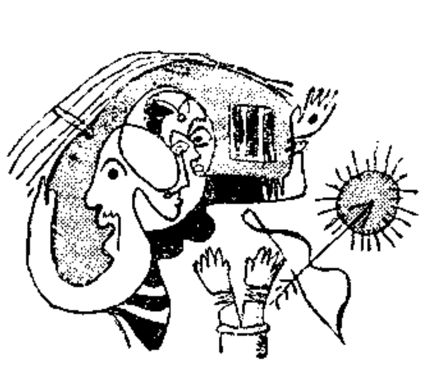

प्राचीन भारत में साम्प्रदायिक सद्भाव

डा० महावीरसिंह

हमारे देश में साम्प्रदायिक सद्भाव की समस्या अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक काल में भी अनेक सम्प्रदाय थे जिनमें परस्पर संघर्ष बना रहता था। वेदों में व्रात्यों, आर्यों और लिंगपूजकों में विरोध का वर्णन मिलता है। स्वयं देवताओं के अलग-अलग संप्रदाय थे। देवासुर संग्राम भी साम्प्रदायिक संघर्ष का ही एक रूप था। वैदिक देवताओं की प्रतिष्ठा को कम करने में उपनिषदों ने प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया तथा देवताओं के स्थान पर ब्रह्म को सर्वोच्च महत्ता प्रदान की। वैदिक देवताओं का निरादर इस सीमा तक हुआ कि देवराज इन्द्र के चरित्र को भ्रष्ट करने के लिए अनेक कथानक गढ़े गए। जिन वैदिक ऋषियों ने इन्द्र की स्तुति में हजारों ऋचाओं का सृजन किया उनके वंशज ने इन्द्र को कामुक, स्त्रैण, डरपोक, चाटुकार आदि विशेषताओं से विभूषित किया।

वैदिक काल में ऋषियों ने आपसी सद्भाव के लिए अनेक प्रार्थनाएं की थीं। इन ऋषियों ने क्षेत्रीयता का मोह त्यागकर संपूर्ण विश्व तथा ब्रह्मांड की भलाई के लिए प्रार्थनाएं कीं। परस्पर भय, आशंका और असुरक्षा के वातावरण को समाप्त करने के लिए सामूहिक स्तुति की :

अभयं नः करिष्यन्तरिक्ष, अभयं द्यावा पृथिवी उभे इमे।

अभयं पश्चादभयं पुरस्तात् उत्तरारद्ध स्त्राद भयं नो अस्तु ।

अभयं मित्रादभयममित्राद् अभयं ज्ञातात भयं पुरोषात्।

अभयं नक्तम भयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।।

(अर्थव : 21/15/5-6

वैदिक ऋषियों ने समूची प्रकृति में समभाव के दर्शन किए तथा पूरे विश्व में एक ही चेतन शक्ति के दर्शन किए :

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति सर्व भूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति..

(यजु. 40/6)

वेदों में मित्र भाव की व्यापक चर्चा की गई है। समस्त प्राणियों में मित्र भाव जाग्रत करने के लिए प्रार्थना की गई है। किसी जाति, वर्ण, या सम्प्रदाय को सम्बोधित न करते हुए सभी प्राणियों को सम्बोधित किया गया है:

दते दृह मा मित्रस्य मा चक्षुषा
सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्

मित्रस्याहं चक्षुषा समीक्षामहे ।।
मोदक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ।।

(यजु. 36/18)

परस्पर सहयोग करना तथा सभी प्राणियों में समत्व का दर्शन करना वेदों की प्रमुख विशेषता है। समाज में शांति बनाए रखने के लिए परस्पर सहयोग एक आवश्यक शर्त है :

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।

(ऋक् 10/191/41)

ऋग्वेद के अंतिम सूक्त में सद्भाव की स्थापना के लिए प्रार्थना की गई है। यह सूक्त साम्प्रदायिक सद्भाव का अनूठा उदाहरण है। इस सूक्त में सभी सम्प्रदायों के विकास की बात कही गई है :

समानो मंत्रः समितिः समानी, समानः मनः सह चित्तमेषाम्।

समानं मंत्र ममि वः समानेन वो हविषा जहोमि ।

(ऋक् 10/191/3)

जन कल्याण की कामना के लिए ऐसी प्रार्थना अन्यत्र दुर्लभ है :

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाग् भवेत् ।।

वेदों में व्रात्यों तथा लिंगायतों का विरोध किया गया है। सुर तथा असुर दो सम्प्रदाय थे जो ईरान से भारतवर्ष आते समय भी आर्यों में थे। अवेस्ता में हुर और अहुर का वर्णन है जो बाद में सुर और असुर के रूप में वेदों में विख्यात हुए। अहुर को ईरान में निकृष्ट माना जाता था क्योंकि ये लोग मद्यपान तथा मांस सेवन को अच्छा नहीं समझते थे और हुर को श्रेष्ठ माना जाता था। अर्थात् सुर जो सुरापान करें तथा भौतिक सुखों का उपभोग करें। भारत में आए हुए आर्यों का बड़ा भाग मदिरा पान करता था और इसे श्रेष्ठ समझता था बाद में सुरों की श्रेष्ठता स्थापित हो गई। सुरों ने यज्ञों में पशुबलि को स्थान दिया था जिसका व्यापक विरोध भी किया गया तथा इन्द्र के विरुद्ध संघर्ष भी किया। भागवत् धर्म इसी बलि प्रथा तथा सुरापन के विरोध में प्रारंभ हुआ। ई. पू. 9 वीं शताब्दी में या उससे कुछ पहले राजा वसु चेयोपरिचरि के समय में बलि प्रथा को लेकर प्रजा के एक भाग ने विद्रोह किया तथा यह व्यवस्था दी गई कि यज्ञों में बलि प्रथा को बंद किया जाए । स्वयं कृष्ण ने इन्द्र की पूजा को बंद करवा दिया।

देवासुर संग्राम दो संप्रदायों में हुआ था जिनके नेता थे आचार्य शुक्राचार्य तथा आचार्य बृहस्पति. उपनिषद्काल में देवताओं की स्थिति कमजोर हो गई तथा ब्राह्मणों का वर्चस्व समाज में स्थापित हो गया। वेदवादी और ब्रह्मवादी लम्बे समय तक आपस में लड़ते रहे।

वादविवादों को समाप्त करने के लिए शास्त्रार्थ की प्रथा उपनिषद काल में प्रारम्भ हो चुकी थी। ऋषि याज्ञवल्क्य ने तथा अन्य ऋषियों ने शास्त्रार्थ द्वारा अपने मतों का प्रतिपादन किया था। बौद्ध धर्म का प्रचार शास्त्रार्थ द्वारा ही हुआ। विष्णु, शिव, ब्रह्म, बौद्ध, जैन, आजीवक आदि सम्प्रदायों में मुठभेड़ होती ही रहती थी। ब्रह्मा के वरदान को विष्णु और विष्णु के वरदान को शिव या इसके विपरीत भी आपस में काटने या परास्त करने की होड़ सी लग गई थी।

इन सभी सम्प्रदायों में सद्भाव स्थापित करने के लिए ऋषियों ने प्रयास किए। इस सद्भाव की प्रतीक है शिव की त्रिमूर्ति। ब्रह्मा, विष्णु और शिव को एक ही मूर्ति में अंकित किया गया। धीरे-धीरे ब्रह्मा का प्रभाव लुप्त हो गया और शिव तथा विष्णु ही दो बड़े सम्प्रदाय रह गए। स्मार्तों ने अपनी पूजा में पांचों देवताओं को स्थान दिया-विष्णु, शिव, दुर्गा, सूर्य तथा गणेश। स्कंध उपनिषद् में विष्णु तथा शिव को एक ही देवता सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। हरीहर की मूर्ति में शिव और विष्णु दोनों ही विद्यमान हैं। अर्द्धनारीश्वर शिव भी सद्भावना तथा समन्वय के प्रतीक हैं। वैदिक, भागवत तथा शैव धर्म के समन्वय से स्मार्त धर्म की स्थापना हुई जिसमें सभी सम्प्रदायों को समान रूप से आदर दिया गया। षट् दर्शन में भी एक ही तत्व को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने का प्रयास किया गया है। ओम् प्रतीक शिव के त्रिशूल और अर्द्ध चन्द्र से बना है जिसमें विष्णु तथा अन्य देवता भी सम्मिलित हैं। संस्कृत नाटक प्रबोध चन्द्रोदय में समन्वय की धारा का सुन्दर विवेचन किया गया है। गीता में ज्ञान, भक्ति, कर्म, योग और सन्यास का समन्वय किया गया है। कृष्ण सभी विवादों को त्यागने का उपदेश देते हैं :

सर्व धर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।

गीता में बौद्ध धर्म तथा उपनिषदों के विचारों का समन्वय है। ई. पू. की शताब्दियों में अनेक विदेशी जातियां भारतवर्ष में आईं जिनके संपर्क से यहां भी मूर्तिपूजा प्रचलित हुई। प्रतीक पूजा अवश्य यहां प्रचलित थी लेकिन मूर्तियों का प्रचलन उपनिषद काल से ही प्रारम्भ हुआ। उपनिषदों में मूर्तिपूजा का स्पष्ट विरोध किया गया है। शक, यवन, पार्थियन, युइश, हूण आदि में मूर्तिपूजा प्रचलित थी जिनकी कला का स्पष्ट प्रभाव यहां की मूर्तिकला पर भी पड़ा। उपनिषदों में मूर्तिपूजा को अनावश्यक माना गया है :

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः

(श्वेताश्वतर 4-19)

अर्थात् जो अरूप है उसकी प्रतिमा कैसे हो सकती है।

न सदृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम

हृदाहृदिस्थं मनसा य एनं एवं विदुः अमृतास्ते भवन्ति ।

(श्वेताश्वतर उपनिषद)

अर्थात् जिसे आंख से नहीं देखा जा सकता उसे केवल हृदय में अनभव किया जा सकता है । सबसे प्राचीन उपनिषदों में कौषातकी मैत्रेयी उपनिषद और श्वेताश्वतर हैं। मैत्रेयी तथा जावलोपनिषाद में मूर्तिपूजा का स्पष्ट विरोध किया गया है।

पाषाणलोहमणिमृण्मय विग्रहेषु पूजा पुनर्न भोगकरी मुमक्षो ।

(मैत्रेयी-26)

अर्थात् पत्थर लोहा कांच या रत्न और मिट्टी की बनी मूर्ति की पूजा से मोक्ष प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस पूजा से भोग-विलास की इच्छा जाग्रत होती है। मोक्ष के लिए भोग विलास तथा बाह्याचार को त्यागना होगा।

तीर्थानि तोयपूर्णानि देवान्काष्ठादि निर्मितान् ।

योगिनो न पूज्यंते स्वात्म प्रत्यय कारणात्।।

(मैत्रेयी 4-52)

पानी से भरे तीर्थ लकड़ी की बनी मूर्तियों की पूजा योगी नहीं करते क्योंकि भगवान आत्मा रूप में हर स्थान पर विद्यमान है।

'कुरान शरीफ' में जो मूर्तिपूजा की निन्दा की गई है उसका संबंध भारतवर्ष से जोड़ना उचित नहीं है। कुरान में कहीं भी भारतीय धर्मों की निंदा नहीं की गई है। अरब देशों में मूर्तिपूजा प्रचलित थी जिसका विरोध कुरान में किया गया है जैसा कि उपनिषदों ने भी किया है। हजरत मुहम्मद साहब से पूर्व हजरत दाऊद के समय में मूर्तियां बनाना मना नहीं था। अरब वाले उन बुतों को खुद पूजने लगे इसलिए इस्लाम में जीवधारी वस्तुओं की मूर्तियां बनाना रोक दिया गया। कुरान में अनेक आयतें उपनिषदों में मिलती जुलती हैं। वेदों में स्वर्ग-नरक की कल्पना, जन्नत और दोजख के रूप में है। महाभारत तथा शतपथ ब्राह्मण में वैवस्वत मनु की प्रलय की कथा हजरत नूह के समय के तूफान की कथा के समान ही है। कयामत के दिन की कल्पना यमराज के दरबार में पेश होने की कल्पना के ही समान है। उपनिषदों का ओम्, कुरान के अलिफ लाम मीम के समान है। ओम् संकेत में अर्द्धचंद्र विद्यमान है तो इस्लाम के पवित्र संकेत अर्द्ध चंद्र और तारे के अनुरूप है। अनेक मंत्रों का उच्चारण 'ओम्' से प्रारम्भ होता है और कुरान का हर पाठ भी, ''बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीमि'' - से प्रारंभ होता है। दोनों का अर्थ है--अल्ला या ईश्वर सर्वव्यापक है तथा वह रहमदिल है । 'ओम्' का अर्थ है--जी हां-अर्थात् जो है।

काफिर शब्द भी हिन्दुओं के संबंध में कहीं भी प्रयुक्त नहीं हुआ है। काफिर का अर्थ है नास्तिक--जो धर्म में विश्वास नहीं करता। भारत के समान ही अरब देशों में भी नास्तिकों की संख्या कम नहीं थी जिन्हें युद्ध द्वारा जीत लिया गया।

भारतवर्ष का घनिष्ठ संबंध अरब तथा अन्य पश्चिमी एशियायी और यूरोप के देशों के साथ था। यही कारण है इस भाग की संस्कृति में समानता है। राजनैतिक कारणों से ही आपसी टकराव प्रारंभ हुआ। अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए ही एक शासक ने दूसरे शासक पर आक्रमण किया तथा धर्म की आड़ में रक्तपात किया। सेना के मनोबल को ऊंचा रखने तथा जोश दिलाने के लिए धर्म का इस्तेमाल भी किया गया। हमारे देश में प्रचार के काफी प्रयास हुए लेकिन ये प्रयास प्रायः शांतिपूर्ण ही रहे। अशोक इन प्रयासों के आदर्श नेता थे। साम्प्रदायिक सद्भाव की नींव ही विविधता पर खड़ी है। हमारा इतिहास इसी विविधता को बनाए रखने का इतिहास है। □

—डा. महावीर सिंह,
एल. आई. जी. 60,
सरस्वती नगर,
जवाहर चौक,
भोपाल-17

बांस की झोंपड़ियों में नए भोर की आहट

✳ जगमोहन लाल माथुर

मानसून की पहली बौछारों के नहाए साल और बांस के हरे-भरे पेड़ों से सजी सड़क पर होकर जब हम गुजरात के सबसे छोटे और दक्षिणवर्ती जिले डांग के वाघई नगर में प्रवेश करते हैं तो सबसे पहले बाईं ओर हमारी नजर पड़ती है--साफ-सुथरे झोंपड़ों की कई कतारों पर। ये झोंपड़े कोई चार साल पहले गुजरात के वन विभाग ने कोतवालिया लोगों के लिए बनाए हैं। घने जंगल की पृष्ठभूमि में एक छोटी-सी नदी के पास बनी इन झोंपड़ियों के पास कुछ देर खड़े होने पर एक नए जीवन की सुगबुगाहट महसूस होने लगती है।

यहां बसाए गए करीब 100 परिवारों में से एक है जमाल का परिवार। जमाल टूटी-फूटी हिंदी में बताता है कि चार साल पहले यहां झोंपड़े दिये जाने के पूर्व आकाश ही उनकी छत थी और धरती ही उनका बिछौना। बांस की खपच्चियों पर चिकनी मिट्टी व गोबर का प्लास्तर, लगाकर बनाई गई दीवारें व खपरैल से बने झोंपड़ों में एक चकोर कमरा व आगे बरामदा है जिसमें बैठकर वे टोकरी बुन सकते हैं। जमाल बताता है कि वह और उसकी पत्नी मिलकर एक दिन में 7–8 टोकरी बनाते हैं और फी टोकरा उन्हें एक रुपया मिलता है। बांस प्राप्त करने या टोकरियां बेचने की कोई परेशानी नहीं क्योंकि वन विभाग ही बांस देता है और वही टोकरियां खरीदकर बेचने की व्यवस्था करता है। इस बस्ती में करीब 15–20 लोगों से हमारी बातचीत हुई और सभी के चेहरे पर एक संतोष का भाव था।

कोतवालिया गुजरात की 22 आदिम जातियों में सबसे पिछड़ी 5 जातियों में से है। सबसे गरीब मानी गई अन्य चार जातियां हैं : काठोडिया, कोलधा, पाढार व सीदी। गुजरात में आदिवासी कुल आबादी का 14 प्रतिशत हैं हालांकि आदिवासियों की आबादी के लिहाज से देश में गुजरात का स्थान मध्यप्रदेश, उड़ीसा व बिहार के बाद चौथा है। गुजरात के आदिवासी राज्य के 32 तालुकाओं और 15 लघु अंचलों में बसे हैं और मुख्यत: दक्षिण गुजरात में हैं। आदिवासियों में विकास कार्य को चलाने के लिए इन्हें 9 परियोजना क्षेत्रों में बांटा गया है जिनका मुख्य अधिकारी परियोजना प्रशासक है। करीब 1683 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र व 94,000 की आबादी वाला सम्पूर्ण डांग जिला परियोजना क्षेत्र मान लिया गया है और इनमें 94 प्रतिशत आदिवासी हैं।

डांग की जनजातियों में सर्वाधिक संख्या कुनबी की है फिर भील व वारली का स्थान है। वनों से आच्छादित इस जिले में जीवन निर्वाह के स्रोत वन ही हैं। पहाड़ी पथरीली भूमि व सिंचाई के अभाव के कारण बहुत कम खेती है और उसमें वृद्धि की अधिक गुंजाइश नहीं है। जो भी थोड़ी बहुत यहां कृषि होती है उनमें नागली (रागी) चावल आदि प्रमुख हैं पर यह काम चलाने भर के लिए है। अच्छे बीजों व रासायनिक खाद का उपयोग बहुत कम होता है क्योंकि यहां के किसानों में रियायती दर पर भी ये चीजें खरीदने की सामर्थ्य नहीं। अब ऊंचाई वाले गांवों में आलू की खेती होने लगी है। फलों के वृक्ष भी बोए जा रहे हैं।

जंगलों में लकड़ी काटना यहां के गरीब लोगों का मुख्य धंधा है। इस क्षेत्र में ठेकेदारों को समाप्त कर निश्चय ही सराहनीय कार्य किया है। पेड़ काटने वाले मजदूरों की "वन श्रम सहकारी समितियां" बना दी गई हैं। आजकल इस प्रकार की 25 सहकारी समितियां काम कर रही हैं। उन्हें वनों की इमारती लकड़ी से जो धन प्राप्त होता है, उसमें से उन्हें 20 प्रतिशत हिस्सा मिलता है। केवल डांग जिले में इमारती लकड़ी की बिक्री से सरकार को प्रतिवर्ष 6 करोड़ रुपये की आमदनी होती है जिसमें से 20 प्रतिशत हिस्सा इन समितियों को मिलता है। इस प्रकार इन समितियों की आर्थिक स्थिति अच्छी है। कुछ "श्रम ठेका समितियां" भी बनाई गई हैं जिससे कि ठेकेदारों द्वारा आदिवासी श्रमिकों का शोषण रोका जा सके। इस प्रकार की चार समितियां यह काम कर रही हैं। राज्य सरकार ऐसी प्रत्येक समिति के लिए 2000 रुपये अथवा उस समिति की राशि का 4 गुना रकम शेयर पूंजी के रूप में देती है। 5000 रुपये की सहायता 3 साल तक प्रबंध के लिए मिलती है। इसके अलावा 3000 रुपये तकनीकी सहायता के रूप में, 10,000 रुपये ऋण के रूप में, 10,000 रुपये उपकरण आदि खरीदने की सहायता के रूप में भी मिलते हैं। फिर भी इस प्रकार की समितियों का गठन कम हुआ है।

दुग्धउत्पादक सहकारिताएं

डांग में एक जो और अच्छा काम हुआ है वह दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों का गठन है। हालांकि गुजरात में जो दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों के लिए देश में ही नहीं दुनिया में विख्यात हो चुका है, आजादी के पूर्व से ही वहां इस प्रकार का आंदोलन पनपने लगा था, पर डांग में दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां 1977-78 से प्रारंभ हुईं। इस समय 19 सहकारी समितियां काम कर रही हैं। इस तरह की एक समिति भीसिया व दो अन्य गांवों को मिलाकर बनाई गई है जिसके संग्रह स्थल पर डिब्बों में दूध इकट्ठा किया जाता है। यह दूध सदस्यों से 2.40 रुपये प्रति लिटर से खरीदा जा रहा है और दूध की कीमत के पैसे में से ही भैंस की लागत भी काटी जा रही

है। इस प्रकार दुग्ध सहकारी समितियां आम लोगों की आमदनी बढ़ाने में मदद कर रही हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में भी डांग जिले ने अच्छी प्रगति की है। 1951 में यहां केवल 94 प्राथमिक पाठशालाएं थी जिनमें बच्चे पढ़ते थे। 30 साल की अवधि में प्राथमिक स्कूलों की संख्या 341 हो गई है और उनमें पढ़ने वाले बच्चों की संख्या 24170 से ज्यादा है। 1952-53 में यहां केवल एक माध्यमिक स्कूल था। अब सरकारी और गैर-सरकारी माध्यमिक स्कूलों की संख्या बढ़कर 10 हो गई है। पर सबसे ज्यादा मदद यहां मिली है, आश्रमशालाओं से। आश्रमशाला ऐसे आवासीय स्कूल हैं जिनमें बच्चों के रहने, खाने-पीने और पढ़ाई आदि सभी की व्यवस्था होती है। इस समय डांग में जो 10 आश्रमशालाएं हैं उनमें से एक पिम्परी में है जिसमें पढ़ रहे 60 बच्चों और शिक्षकों से हमारी मुलाकात हुई। मैंने 10 साल की एक आदिवासी लड़की से जो चौथी कक्षा में पढ़ती है, बातचीत की। उसके गरीब माता-पिता चौथी तक तो क्या पहली कक्षा में पढ़ाने का भार उठाने में असमर्थ हैं।

अनाज बैंक

आदिवासियों को एक और मुसीबत का सामना करना पड़ता है। बारिश के दिनों में जब उनके पास खाने के लिए अनाज नहीं रहता तो महाजन से उधार लेकर गुजारा करते हैं और फसल आने पर दुगुना-तिगुना अनाज महाजन को लौटाना पड़ता है। इस शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए अनाज बैंक स्थापित किए गए हैं। इन बैंकों से आदिवासी अपनी जरूरत का अनाज उधार ले लेते हैं और फसल आने पर 10 प्रतिशत जोड़कर उसे बैंक को वापस कर देते हैं।

पर सभी प्रयासों के बावजूद डांग अभी तक सड़कों, चिकित्सा सुविधाओं व पीने के पानी की सुविधाओं के लिहाज से काफी पिछड़ा हुआ है। 312 में से करीब 70 प्रतिशत गांव अभी तक पक्की सड़कों से जुड़े हुए नहीं हैं। इसलिए वहां राजकीय परिवहन की बसों का जाना संभव नहीं है। उद्योग के नाम पर

बांस से टोकरी बनाती हुई आदिम जाति की एक महिला

केवल एक आरा मिल वागई में है जो डांग जिले का प्रवेशद्वार है। जिले का प्रधान नगर अहवा है जो वागई से सर्पिल सड़क से जुड़ा है। अहवा में दिन छिपते ही सड़कें वीरान हो जाती हैं और लोग अपने-अपने घरों में सिमट जाते हैं। वैसे आदिवासी देर रात तक लोक-वाद्य पर मस्त होकर नाचते रहते हैं।

डांग में रहने वाले कोतवालिया जाति की तरह की एक अन्य अत्यंत गरीब आदिम जाति है कोलधा। यह लोग मुख्यत: वलसाड़ और सूरत जिले में हैं, और वे भी मुख्यत: बांस के काम पर निर्भर रहते हैं। वांसदा में एक प्रशिक्षण चल रहा है जहां कोलधा जाति की 30 लड़कियां खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के सहयोग से माचिस बनाने का काम सीख रही हैं। उन्हें 125 रुपये प्रतिमास की दर से वेतन दिया जाता है। काम सीखने पर यह अपने घर में ही काम कर सकती हैं और माचिस इस केन्द्र को बेच सकेंगी।

बांसदा क्षेत्र में किसानों की खुशहाली के लिए जो अन्य कदम उठाए गए हैं उनमें एक है धान की खेती के लिए क्यारी तैयारी करने में सरकारी सहायता। इस योजना के अंतर्गत आदिवासी किसानों को एक भूखण्ड लेकर उस पर तकनीकी देख-रेख में धान की पौध तैयार कराई जाती है। किसान को 500 रुपये अथवा कुल खर्च का 50 प्रतिशत सहायता

के रूप में दिया जाता है। बांसदा में 660 परिवारों ने इस प्रकार की योजना से लाभ उठाया है।

उपयोजना प्रणाली

गुजरात और देश के अन्य आदिवासी इलाकों में आदिवासियों के विकास की गति में तेजी उपयोजना प्रणाली के अपनाने से शुरू हुई है। यह प्रणाली पांचवीं पंचवर्षीय योजना में शुरू की गई थी और इसका उद्देश्य आदिवासियों के लिए विशेष राजस्व की व्यवस्था करना है। विभिन्न क्षेत्रों की आदिमजाति के विकास के भिन्न-भिन्न स्तरों पर हैं और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए भी अलग-अलग किस्म के प्रयासों की जरूरत है। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में 644 करोड़ रुपये इस काम पर खर्च हुए थे जिसमें 120 करोड़ रु. केन्द्र की विशेष सहायता के रूप में थे। छठी पंचवर्षीय योजना में 5000 करोड़ रुपये आदिवासियों के कल्याण के लिए रखे गए हैं।

गुजरात में आदिवासी विकास परियोजना के कार्यों की एक यह विशेषता है कि प्रत्येक योजना प्रशासक के पास कुछ धनराशि अपने विवेक से खर्च करने के लिए नियत होती है, इसे "न्यूक्लिअस बजट" कहा जाता है। इस व्यवस्था से परियोजना प्रशासन अपने क्षेत्र की विशिष्ट समस्याओं का समाधान करने के लिए तुरन्त कार्रवाई कर सकता है। राजपिपला क्षेत्र में परियोजना प्रशासक ने इसी व्यवस्था के अधीन 5 किलोमीटर की अधिक दूरी से स्कूल आने वाले छात्रों को आधी रियायती दर पर साइकिलें दिलाई हैं। 404 रुपये की साइकिल इन छात्रों को 202 रुपये में मिल जाती है क्योंकि 202 रुपये आदिवासी विकास परियोजना की सहायता के रूप में देती है। इस व्यवस्था से आदिवासी छात्रों द्वारा पढ़ाई बीच में ही छोड़ देने की घटनाएं कम हुई हैं। मांडवी परियोजना में इसी बजट के तहत आश्रमशाला के बच्चों को सोने के लिए गद्दे प्रदान किए गए हैं। आदिवासियों को ऋण दिलाने में सुविधा के लिए गुजरात राज्य में आदिवासी विकास निगम भी बनाया गया है। गुजरात के आदिवासी कल्याण सचिव श्री टी. डी. सोयन्तर का कहना है कि 1980-81 वर्ष में ही विभिन्न कार्यक्रमों की मदद से 1,66,000 परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठने में मदद मिली है। इनमें से 74,700 व्यक्ति आदिवासी थे। □

रात अंधेरी दीवाली की

रात अन्धेरी दीवाली की
फिर भी बहुत उजाला है
नया सवेरा हुआ सभी ने
मन का दीपक बाला है
नई आशा की किरणें फूटी
नया नया विश्वास जगा
वैर भाव के बन्धन टूटे
नूतन युग का उदय हुआ
नई दृष्टि सबने अपनाई
नई परम्परा शुरू हुई
नई उमंगों के दिन आए।
गंदी बातें दूर गई
भेद भाव की गहराई को
सबने फेंक निकाला है
नया सवेरा हुआ सभी ने
मन का दीपक बाला है
छोड़ा सबने करना शोषण
सबने सबका दर्द बंटाया
जहां अन्धेरा बहुत घना था
वहां नया सूरज मुसकाया
मन मानस में भाव जगा सब
कुछ परिश्रम से करने का
दीप शिखा में भाव जगा अब
घना अंधेरा हरने का
आंधी में भी नहीं बुझेगा
जो दीपक जलने वाला है
नया सवेरा हुआ सभी ने
मन का दीपक बाला है

पूरन सरमा
सिकन्दरा-303326
(जयपुर-राजस्थान)

गांवों के गरीब लोगों के लिए आवास

जी० सी० माथुर

निदेशक, राष्ट्रीय भवन संगठन

हमारे देश के देहाती इलाकों में आवास की समस्या के अनेक पहलू हैं और यह समस्या काफी बड़ी है। इन क्षेत्रों में आवास की स्थितियां कई प्रकार से असंतोषजनक हैं। गांवों में कम लागत से जो मकान बनाए जाते हैं वे आमतौर पर छोटे होने के साथ-साथ कमजोर भी होते हैं। यही नहीं, इन मकानों में सफाई की भी समुचित व्यवस्था नहीं होती है। यहां मकान बनाने में स्थानीय रूप से उपलब्ध सामान का इस्तेमाल किया जाता है जो आमतौर पर कच्चा और गैर-टिकाऊ होता है। इसके कारण मकानों की जल्दी-जल्दी मरम्मत करने की आवश्यकता पड़ती रहती है।

मकानों की कमी

वर्ष 1971 में देहाती क्षेत्रों में बने हुए मकानों की संख्या लगभग 7 करोड़ 44 लाख थी। इनमें 80 लाख मकान बिल्कुल कच्चे थे जिनका कोई इस्तेमाल नहीं किया जा सकता था। 2 करोड़ 44 लाख मकान ऐसे थे जो कच्चे होते हुए भी काम के थे। 2 करोड़ 79 लाख मकान थोड़े कच्चे, थोड़े पक्के बने हुए थे। केवल 1 करोड़ 41 लाख मकान ही पक्के थे। इस प्रकार गांवों में रहने वाले 7 करोड़ 80 लाख परिवारों के लिए रहने लायक 6 करोड़ 64 लाख मकान ही उपलब्ध थे और 1 करोड़ 16 लाख मकानों की कमी थी। राष्ट्रीय भवन संगठन (एन.बी.ओ.) द्वारा हाल ही में लगाए गए एक अनुमान के अनुसार 1981 के शुरू में देहाती इलाकों में लगभग 1 करोड़ 70 लाख मकानों की कमी थी।

गांवों के मकानों का स्तर घटिया होने के अलावा वहां लोगों के अधिक संख्या में रहने की भी समस्या है। 1971 की जनगणना के अनुसार एक औसत परिवार का आकार 5/6 था। यह भी अनुमान लगाया कि गांवों में रहने वाले 76 प्रतिशत परिवार एक या दो कमरों में ही अपना गुजारा करते थे।

न्यूनतम आवश्यकताएं

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 28वें चक्र (अक्तूबर, 1973–जून, 1974) में यह अनुमान लगाया गया कि गांवों के लगभग 76 प्रतिशत परिवारों के मकानों में शौचालय नहीं बने हुए थे। लगभग 65.3 प्रतिशत परिवार कुओं से, 12.7 प्रतिशत तालाबों और जोहड़ों, नदियों आदि से, 15.6 प्रतिशत नलकूपों और हैन्ड पम्पों से तथा 1.2 प्रतिशत अन्य स्रोतों से जल प्राप्त करते थे। जल के इन सभी स्रोतों में जल के दूषित होने का खतरा बना रहता है। थोड़े से गांवों को छोड़कर अधिकांश गांवों का विकास अनियोजित रहा है। इन गांवों की गलियां और रास्ते बहुत ही तंग हैं जिनमें बारिश के दिनों में कीचड़ और दलदल बनी रहती है।

गरीबों को मकानों के लिए जमीन

पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान चलाए गए न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम में देहाती इलाकों के भूमि हीन मजदूरों को मकान बनाने के लिए मुफ्त जमीन तथा आवश्यक सहायता देने को उच्च प्राथमिकता दी गई। भूमिहीन श्रमिकों के लिए ग्रामीण आवास स्थल और गृह निर्माण की योजना निर्माण और आवास मंत्रालय द्वारा अक्तूबर, 1971 में शुरू की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत गांवों में रहने वाले भूमिहीन मजदूरों के लिए जमीन का अधिग्रहण करने तथा उन्हें मकान बनाने के लिए जमीन देने के लिए राज्य सरकारों को शत-प्रतिशत अनुदान/सहायता दी गई थी। जिन भूमिहीन मजदूरों के पास मकान बनाने के लिए जमीन या बना बनाया मकान या कोई झोंपड़ी या अपनी जमीन नहीं थी, उन्हें मकान बनाने के लिए मुफ्त जमीन दी गई। जिन लोगों को इस प्रकार जमीन दी गई, उनसे यह आशा की जाती है कि वे अपने ही साधनों से इस जमीन पर मकान या झोंपड़ी बना लेंगे। अप्रैल, 1974 के बाद से यह योजना राज्य क्षेत्र को हस्तांतरित कर दी गई है।

भूमिहीन मजदूरों के अनुमानित एक करोड़ 25 लाख पात्र परिवारों में से मार्च, 1981 तक लगभग 86 लाख परिवारों को मकान बनाने के लिए जमीन दी जा चुकी है। मार्च, 1985 तक मकान संबंधी सहायता पाने वाले पात्र परिवारों की संख्या बढ़कर 1 करोड़ 45 लाख हो जाएगी। छठी योजना में बाकी बचे सभी भूमिहीन परिवारों को मकान बनाने के लिए जमीन देने की व्यवस्था की गई है। जमीन के प्लाटों का विकास करने, पहुंच मार्ग बनाने तथा 30 से 40 परिवारों के एक समूह के लिए ट्यूबवैल बनाने के लिए प्रति परिवार पर 250 रुपये खर्च करने की व्यवस्था की गई है। निर्माण सहायता

प्रति-परिवार 500 रुपये होने की संभावना है। यह मान लिया गया है कि श्रम संबंधी सारे काम जमीन पाने वाले लोगों द्वारा ही पूरे किए जाएंगे। इस कार्यक्रम पर 354 करोड़ रुपये—मकान के लिए भूमि की व्यवस्था करने के लिए 170 करोड़ रुपये और निर्माण सहायता के रूप में 184 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

विशेष डिजाइन के मकान

राष्ट्रीय भवन संगठन ने लागत सीमाओं को ध्यान में रखते हुए न्यूनतम आवश्यकताओं की धारणा पर आधारित भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के लिए मकान का एक खास डिजाइन तैयार किया है। यह डिजाइन राज्य सरकारों और आवास एजेंसियों के बीच बड़े पैमाने पर प्रचारित किया गया है। कई स्थानों पर इसमें स्थानीय जरूरतों के अनुकूल परिवर्तन करके इस डिजाइन को स्वीकार कर लिया गया है।

यह डिजाइन भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को दिए जा रहे 6 मीटर × 13.7 मीटर (100 वर्ग गज) के प्लाटों के लिए बहुत ही उपयुक्त है।

बीस वर्ग मीटर के कुर्सी क्षेत्र में 2.7 मीटर × 4.1 मीटर का एक कमरा, 1.5 मीटर × 1.8 मीटर की रसोई के लिए छतदार जगह और 1.75 मीटर × 2.5 मीटर का चबूतरा बन जाता है। इस डिजाइन से मकान बनाने पर बाद में 4.5 मीटर × 2.4 मीटर का एक और कमरा भी बनाया जा सकता है।

मकान के पिछली तरफ पशु बांधने तथा 1.2 मीटर × 0.9 मीटर का शौचालय बनाने के लिए भी जगह है। इसके अलावा यहां 1.5 मीटर × 1.3 मीटर जगह और भी उपलब्ध होती है जहां नहाने-धोने का काम किया जा सकता है। मकान के सामने की तरफ खुली जगह बाहर उठने-बैठने तथा कुटीर उद्योग के लिए काम में ली जा सकती है।

मकानों की प्रदर्शनी

राष्ट्रीय भवन संगठन के डिजाइन पर आधारित ग्रामीण क्षेत्रों के लिए इन मकानों को दिल्ली के सुल्तानपुर गांव में प्रदर्शित किया गया है।

राष्ट्रीय भवन संगठन देश के विभिन्न क्षेत्रों के चुने हुए गांवों में पर्यावरण के सुधार पर बल देते हुए ग्रामीण क्षेत्रों के लिए प्रदर्शन के उद्देश्य के लिए इन मकानों का निर्माण कर रहा है। स्थानीय रूप से उपलब्ध निर्माण सामग्री का इस्तेमाल करके, बेहतर डिजाइन का मकान बनाकर और मकान बनाते समय स्वयं काम करके मकान की कीमत को कम रखना मुख्य बात है। इस योजना के अन्तर्गत राष्ट्रीय भवन संगठन की क्षेत्रीय ग्रामीण आवास शाखाएं देश के चुने हुए गांवों में 20 प्रदर्शन मकानों के 26 समूहों का निर्माण कर चुकी है।

भवन निर्माण की नई तकनीकें

इन परियोजनाओं में कम लागत पर मकान बनाने के लिए स्थानीय निर्माण सामग्री का बेहतर इस्तेमाल करने तथा नई निर्माण तकनीकों का प्रदर्शन किया गया है। इन तकनीकों में दीवारों को वर्षा में झड़ने से बचाने के लिए जलरोधी मिट्टी की लिपाई करना, अधिक टिकाऊ दीवारें बनाने के लिए मिट्टी के थोड़े पक्के ढेलों का इस्तेमाल करना, छप्पर को आग से बचाने और बांसों को सुरक्षित बनाने संबंधी उपाय करना, गर्म और नमी वाले तटीय, ठंडे और पहाड़ी इलाकों में छप्पर की छत की जगह डामर की परत वाली छत डालना, घटिया लकड़ी को पक्का करने के बाद इस्तेमाल करने तथा कच्ची ईंटों का इस्तेमाल करना आदि शामिल हैं।

प्रदर्शन परियोजनाओं ने गांव के लोगों को बेहतर डिजाइन के मकान बनाने, स्थानीय निर्माण सामग्री का इस्तेमाल करने तथा अपनी मदद अपने आप करने के लिए प्रेरित किया है। इसके फलस्वरूप, अनेक राज्य सरकारों और निजी एजेंसियां बड़े पैमाने की ग्रामीण आवास योजनाओं को पूरा करने के लिए, तकनीकी परामर्श और मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय भवन संगठन और इसकी क्षेत्रीय आवास शाखाओं के पास आने लगे हैं।

जल पूर्ति और सफाई

ग्रामीण विकास के लिए एक प्राथमिकता वाला क्षेत्र पेय जल की पूर्ति, शौचालय, गन्दे पानी की निकासी, गलियों को पक्का करने तथा इनमें प्रबन्ध करने, कूड़ा-करकट, मल, गोबर के निपटान के प्रावधान सहित पर्यावरण में सुधार लाना है। राष्ट्रीय भवन संगठन और इसकी क्षेत्रीय ग्रामीण आवास शाखाएं पर्यावरण में सुधार को बढ़ावा देने, जिसमें भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए गांवों का सुव्यवस्थित ढंग से विकास किया जाना शामिल है, के लिए प्रयत्नशील हैं। हम वर्तमान ग्रामीण बस्तियों में सुधार लाने, गांवों में स्वच्छता को बढ़ावा देने के लिए शौचालयों की व्यवस्था करने तथा न केवल स्वास्थ्य, विशेषकर आंखों को नुकसान न पहुंचने देने के लिए बल्कि जलाने की लकड़ी की बचत करने के लिए बिना धुएं वाले चूल्हों की तरफ विशेष ध्यान दे रहे हैं।

राष्ट्रीय भवन संगठन ग्रामीण क्षेत्रों में आवास की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए देशव्यापी आधार पर प्रचार कर रहे हैं। ग्रामीण आवास के क्षेत्र में अनुसंधान करने, प्रशिक्षण देने और विस्तार कार्य करने के लिए नौ क्षेत्रीय केन्द्र वल्लभ विद्यानगर (गुजरात), बंगलौर, चण्डीगढ़, नई दिल्ली, हावड़ा, श्रीनगर, जोधपुर, त्रिवेन्द्रम और वाराणसी में हैं। इन केन्द्रों ने तकनीकी कार्मिकों, खंड विकास अधिकारियों और पंचायत अधिकारियों के लिए 250 से अधिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का आयोजन किया है जिनके माध्यम से विभिन्न राज्यों के 2600 से अधिक प्रतिनिधियों को सेवा के दौरान प्रशिक्षण दिया गया।

ग्रामीण आवास में सुधार ग्राम्य जीवन के सामाजिक-आर्थिक पहलुओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। इसलिए संगठन की शाखाओं ने 300 से अधिक चुने हुए गांवों में सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण का काम शुरू किया है। इन डिजाइनों के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों के लिए उपयुक्त 200 से अधिक कम लागत वाले मकान तैयार करके मार्गनिर्देशन के लिए राज्य सरकारों और उनकी एजेंसियों को सौंपे गए हैं। गांवों में स्कूलों, स्वास्थ्य केन्द्रों और पंचायत घरों जैसे अन्य भवनों के किफायती डिजाइन भी तैयार किए गए हैं। □

छठी पंचवर्षीय योजना

डा० गिरीश मिश्र

हमने हर नई चुनौती का मजबूती और दृढ़ निश्चय से सामना किया है। हम इस बात को विश्वास के साथ जोर देकर कह सकते हैं कि विकास ने राष्ट्र की क्षेत्रीय, भाषाई, सामाजिक व साम्प्रदायिक विभिन्नताओं के बावजूद हमारे राष्ट्र को मजबूत करने में योग दिया है। उससे हमारा प्रजातंत्र मजबूत हुआ है और वह हमारे समाज को समाजवाद की दशा में आगे ले जा रहा है।

—प्रधानमंत्री, श्रीमती इन्दिरा गांधी

सन् 1980 में प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में केन्द्र में नयी सरकार के पदारूढ़ होने के तुरन्त बाद जिस बात पर सबसे पहले ध्यान दिया गया, वह थी—छठी योजना के लिए सही प्रकार की प्राथमिकताएं निश्चित करते हुए जल्दी में उसे तैयार करना। आशा के अनुकूल योजना आयोग ने दिन-रात काम करके छठी योजना को एक वर्ष में ही अंतिम रूप दे दिया और राष्ट्र के मूल उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इस दिशा में कार्यवाही शुरू हो चुकी है। इस योजना में जो मुख्य उद्देश्य रखे गए हैं वे हैं :—

अर्थ-व्यवस्था की संवृद्धि दर में महत्वपूर्ण वृद्धि करना; संसाधनों के उपयोग में कुशलता बढ़ाना और उत्पादकता में सुधार लाना; आर्थिक और प्रौद्योगिक आत्म-निर्भरता प्राप्त करने के लिए आधुनिकीकरण की गति को बढ़ाना; गरीबी और बेरोजगारी में उत्तरोत्तर कमी करना; ऊर्जा के देशी साधनों का तेजी से विकास करना; न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के जरिए इस प्रकार की व्यवस्था करना जिससे कि देश के सभी भाग निर्धारित अवधि में राष्ट्रीय रूप में स्वीकृत स्तर प्राप्त कर लें, विशेषकर आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से सुविधा वंचित जनसंख्या और सामान्य लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना; लोक व सरकारी नीतियों तथा सेवाओं के पुर्नवितरण संबंधी आधार को इस प्रकार मजबूत करना जिससे कि आय की विषमता में कमी आए; विकास की गति और प्रौद्योगिकीय लाभ प्राप्त करने में क्षेत्रीय विषमता में उत्तरोत्तर कमी लाना; छोटे परिवार के मानक को स्वेच्छा से स्वीकार करने के जरिए जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने वाली नीतियों को बढ़ावा देना; पर्यावरण संबंधी संरक्षण और सुधार को बढ़ावा देकर विकास के अल्पावधि और दीर्घावधि लक्ष्यों के बीच सामंजस्य लाना और विकास की प्रक्रिया में सभी वर्गों के लोगों का सक्रिय सहयोग लेना।

छठी योजना के लिए बनायी गई नीति में कृषि और उद्योग दोनों ही की आधारभूत संरचना को बढ़ाने के लिए अनिवार्य रूप से साथ-साथ प्रगति करनी होगी जिससे कि निवेश, उत्पादन बढ़ाने की गति तेज हो और इससे जनता के लिए तैयार किए गए विशेष कार्यक्रमों की व्यवस्था, खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराए जा सकें ताकि लोगों की न्यूनतम मूलभूत आवश्यकताएं पूरी की जा सकें।

यह योजना इस मान्यता पर आधारित है कि गरीबी, अर्ध एवं पूर्ण बेरोजगारी जैसी समस्याओं का संतोषजनक समाधान एक तेजी से विकसित होती हुई अर्थ-व्यवस्था के चौखटे में ही हो सकता है। इसलिए आर्थिक संवृद्धि की औसत दर छठी योजना के दौरान 5.2 प्रतिशत प्रति वर्ष करने का लक्ष्य रखा गया है। योजनाकारों के अनुसार वार्षिक संवृद्धि दर को इससे ऊपर बढ़ाना संभव नहीं है क्योंकि बड़ी सिंचाई, बिजली, परिवहन और इस्पात सम्बन्धी परियोजनाओं में निर्माण काल काफी लंबा होता है इसलिए पूंजी लगाने और फल प्राप्त करने के बीच बड़ा अन्तराल होता है। इसके विपरीत अगर संवृद्धि दर को 5.2 प्रतिशत से कम कर दिया जाए तो कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों में न्यूनतम कालबद्ध कार्यक्रम रखे गए हैं वे पूरा नहीं हो पाएंगे और न ही रोजगार के अवसरों के संबंध में जो लक्ष्य रखा गया है वह पूरा हो पाएगा।

छठी योजना ने एक बार फिर देश के औद्योगीकरण के महत्व को रेखांकित किया है। यह स्पष्ट कर दिया गया है कि नयी सरकार कृषि और कुटीर तथा लघु उद्योगों के महत्व को न तो कम करना चाहती है और न ही उनके विकास की जरूरतों को नजर अंदाज। मगर यह स्पष्ट है कि बिना आधुनिक उद्योगों के निर्माण के कृषि का भी विकास संभव नहीं है तथा देश आर्थिक आजादी पूरी तरह नहीं प्राप्त कर सकता। इतना ही नहीं, देश की अखंडता की रक्षा भी आधुनिक उद्योगों के अभाव में सम्भव नहीं है।

छठी पंचवर्षीय योजना के निर्माण के साथ ही राजकीय औद्योगिक क्षेत्र के महत्व की पुर्नप्रतिष्ठा हुई। इस क्षेत्र ने राहत की सांस ली है। पिछले शासन काल में विश्वव्यापी टेंडरों की व्यवस्था तथा राजकीय क्षेत्र की औद्योगिक इकाइयों के मालों की खरीद के संबंध में दी जाने वाली प्राथमिकता से वंचित करने वाले प्रतिगामी कदम उठाए गए थे। अब खरीद सम्बन्धी प्राथमिकता को फिर से लागू कर दिया गया है। राजकीय क्षेत्र की औद्योगिक इकाइयों की कार्यकुशलता में निश्चित सुधार लाने के लिए कदम उठाए जाने वाले हैं। प्रबंधकों की जिम्मेदारियां निश्चित करने के अतिरिक्त इन इकाइयों के मालों की कीमतों को तर्कसंगत ढंग से निश्चित किया जाएगा। योजना आयोग और प्रधानमंत्री दोनों ने जोर दिया है कि इन इकाइयों को लाभप्रद बनाया जाए जिससे देश के आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त संसाधन जुटाए जा सकें।

दीर्घकालिक योजना का अंग

छठी पंचवर्षीय योजना एक 15 वर्षीय दीर्घकालीन योजना का अंग है । 1979-80 की कीमतों के आधार पर देश का कुल घरेलू सकल उत्पादन जो योजना के आरम्भ में 9 खरब 70 अरब 51 करोड़ रुपये का था वह 5.2 प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़कर 1984-85 में 12 खरब 50 अरब 50 करोड़ और 1994-95 में 21 खरब 36 अरब रुपये मूल्य का हो जाएगा। इस दौरान देश की जन-संख्या भी बढ़ेगी। छठी योजना के अंत तक जनसंख्या 69 करोड़ 62 लाख हो जाएगी। इस तरह प्रति व्यक्ति आय में छठी योजना के अंत तक 3.28 प्रतिशत वृद्धि होने की संभावना है।

अगर योजना के कार्यान्वयन में कोई बड़ा खलल नहीं पहुंचा तो योजनाकारों के अनुसार गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाली जनसंख्या में भारी कमी आएगी। छठी योजना के आरम्भ में 48.44 प्रति-शत भारतीय जनता गरीबी की रेखा के नीचे थी। यह संख्या घटकर 1984-85 तक 30 प्रतिशत पर और 1994-95 तक 8.74 प्रतिशत पर आ जाएगी। अनुमान लगाया गया है कि देश में लगभग 5000 विकास खंड हैं और हर खंड में लगभग 20,000 परिवार होते हैं जिनमें से 10,000 से 12,000 परिवार गरीबी के स्तर से नीचे के हैं। छठी पंच-वर्षीय योजना के अंतर्गत समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के जरिए प्रत्येक विकास खंड में औसतन 3000 परिवारों को विशेष सहायता देकर इनका स्तर सुधारा जाएगा। 3000 परिवारों में से औसतन 2000 परिवारों को कृषि और संबद्ध कार्यकलापों, 500 परिवारों को ग्रामीण और कुटीर उद्योगों तथा 500 परिवारों को अन्य सेवाओं के अंतर्गत काम दिया जाएगा। आम लोगों की औसत जिन्दगी भी पहले से लम्बी होगी। 15 वर्षों के बाद एक आम आदमी औसत 60 साल तक जिन्दा रहने की आशा कर सकेगा।

योजनाकार इस बात के प्रति जागरूक हैं कि सिर्फ संवृद्धि दर को बढ़ा देने से ही गरीबी की समस्या का समाधान नहीं हो सकता । संवृद्धि दर को बढ़ाने के साथ ही जरूरी है कि देश में आय और धन का सही ढंग से बंटवारा हो। उन्होंने गरीब लोगों की आय और उपभोग के स्तर को ऊंचा उठाने पर जोर दिया है। उनके अनुसार छठी योजना के आरम्भ में कुल निजी उपभोग व्यय में देश के सबसे गरीब 30 प्रतिशत लोगों का हिस्सा केवल 13.6 प्रतिशत जिसे छठी योजना के अंत तक 16.7 और 1994-95 तक 17.3 प्रतिशत कर देने का इरादा है। गरीब जनसंख्या के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए सामाजिक सेवाओं का विस्तार किया जाएगा।

छठी योजना पर कुल मिलाकर 17 खरब 22 अरब 10 करोड़ रुपये खर्च होंगे। इसमें सार्वजनिक क्षेत्र का हिस्सा 9 खरब 75 अरब रुपये होगा। योजना-कारों के अनुसार पांचवीं योजना (1974-79) की तुलना में छठी योजना पर 148 प्रतिशत अधिक राशि व्यय होने वाली है। अगर हम कीमतों की वृद्धि को ध्यान में रखें तो भी छठी योजना का परिव्यय 80 प्रतिशत अधिक पड़ता है।

छठी योजना के दौरान खाद्यान्नों का उत्पादन 15 करोड़ 40 लाख टन करना है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध सिंचाई सुविधाओं और प्राविधिक ज्ञान के पूर्ण उपयोग पर जोर दिया जाएगा जिससे प्रति एकड़ पैदावार बढ़ायी जा सके।

औद्योगिक क्षेत्र में संवृद्धि की दर 7 प्रतिशत वार्षिक करने का लक्ष्य है। इसको प्राप्त करने के लिए कोयला, बिजली, खनिज तेल और परिवहन सेवाओं के उत्पादन में अविलम्ब वृद्धि करने की आवश्यकता को रेखांकित किया गया है।

औद्योगिक क्षेत्र में उत्पादन संबंधी लक्ष्यों की प्राप्ति बहुत कुछ बचत एवं निवेश की अनुकूल दरों पर निर्भर करेगी। सकल बचत अनुपात 24.5 प्रतिशत करना होगा यानी सकल राष्ट्रीय आय का 24.5 प्रतिशत बचत करके निवेश करना होगा।

छठी योजना की सफलता के संबंध में अनेक शंकाएं व्यक्त की जा रही हैं जिनको नजरअंदाज करना घातक होगा। पहली शंका कीमतों में तेज वृद्धि को लेकर है। छठी योजना संबंधी परिव्यय का निर्धारण 1979-80 की कीमतों के आधार पर किया गया है। तब से अब तक कीमतों में काफी वृद्धि हुई है और अब भी स्फीति की स्थिति बरकरार है। इसे देखते हुए यह कहना गलत नहीं है कि निर्धारित परिव्यय लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे। इतना ही नहीं आयातित मालों विशेषकर खनिज तेल पेट्रोलजन्य पदार्थों, कच्चे मालों और मशीनों की कीमतें तेजी से बढ़ रही हैं। पश्चिमी देशों में मुद्रास्फीति की स्थिति में कोई सुधार होने का लक्षण नहीं दीख रहा है इसलिए ऐसी कोई आशा नहीं की जा सकती कि निकट भविष्य में आयात खर्च घटेगा। ईरान-इराक की लड़ाई तथा ब्रिटेन के जातीय दंगों के कारण प्रवासी भारतीयों द्वारा भेजी जाने वाली विदेशी मुद्रा की राशि में कमी हो रही है। इन सबका असर भारत के भुगतान पर कोई अच्छा नहीं पड़ेगा। आंकड़ों से स्पष्ट है कि 1980-81 में विदेश व्या-पार में 54 अरब रुपये का घाटा रहा और इस साल की स्थिति कोई खास अच्छी नहीं है। स्वयं वाणिज्य मंत्री ने इसकी ओर संकेत किया है।

छठी योजना की इस बात को लेकर भी आलोचना की जा रही है कि वित्तीय संसाधन जुटाने के लिए अप्रत्यक्ष कराधान तथा घाटे की अर्थ-व्यवस्था का सहारा विशेष रूप से लिया जाने वाला है। केन्द्रीय सरकार को एक खरब 22 अरब 90 करोड़ रुपये की अतिरिक्त राशि जुटाने का जिम्मा दिया गया है। इसमें से 51 अरब 40 करोड़ रुपये अतिरिक्त कराधान से जुटाए जाएंगे और इस सिल-सिले में अप्रत्यक्ष करों का ही मुख्य रूप से सहारा लिया जाएगा। 50 अरब रुपयों की प्राप्ति घाटे की वित्त व्यवस्था द्वारा की जाएगी। कहना न होगा कि अप्रत्यक्ष करों में वृद्धि तथा घाटे की वित्त व्यवस्था का आम आदमी की स्थिति एवं कीमतों के स्तर पर बुरा असर पड़ेगा जिससे योजना के खर्च में वृद्धि होगी। इस प्रकार एक दुश्चक्र जन्म ले सकता है। □

परिवार नियोजन के प्रति अब सभी सजग हैं।

बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए समन्वित प्रयास

बच्चों के सर्वांगीण विकास और उनके कल्याण में भारत की स्थाई रुचि के बारे में सभी भली-भांति जानते हैं। यह बाल कल्याण के लिए देश की प्रतिबद्धता––जिसका प्रावधान हमारे संविधान में भी किया गया है––की एक अभिव्यक्ति है। संविधान में बच्चों द्वारा कारखानों में काम करने पर रोक लगाई गई है (अनुच्छेद 24); उन्हें शोषण और दुरुपयोग के विरुद्ध संरक्षण प्रदान किया गया है (अनुच्छेद 39) और 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को अनिवार्य रूप से निःशुल्क शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध कराने का प्रावधान (अनुच्छेद 45) है।

बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति

बच्चों के सुव्यवस्थित और सुनियोजित विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 1974 में एक राष्ट्रीय नीति तैयार की गई और इसके अन्तर्गत एक चरणबद्ध कार्यक्रम तैयार किया गया। राष्ट्रीय नीति में बच्चों को "राष्ट्र की सबसे अधिक महत्वपूर्ण निधि" बताया गया है, जिनके "पालन पोषण और विकास" का उत्तरदायित्व देश का है। इस नीति में इस बात पर बल दिया गया है कि बच्चों को उनके जन्म से पहले और बाद में या उनके विकास काल के दौरान उनके सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त रूप में समुचित सेवाएं उपलब्ध कराना राज्य का कर्तव्य होगा। राष्ट्रीय नीति में बाल कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम तैयार करने और अन्य उपाय करने पर विशेष बल दिया गया है और उनकी रूपरेखा भी बताई गई है। इसमें विभिन्न प्राथमिकताओं का एक 15 सूत्री कार्यक्रम है जिसका लक्ष्य बच्चों की कल्याण संबंधी सेवाओं के कार्यक्षेत्र का धीरे-धीरे प्रसार करना है। नीति में यह घोषणा की गई है कि एक "उचित समयावधि में देश के सभी बच्चे अपने संतुलित विकास के लिए अनुकूलतम सुविधाएं प्राप्त कर सकेंगे" जो उन्हें स्वास्थ्य पोषण, निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा तथा कमजोर वर्गों के लिए विशेष प्रावधानों के अंतर्गत प्राप्त होंगी।

सामाजिक दृष्टि से पिछड़े बच्चों को, जो अपराधी बन गए हैं या जिन्हें भीख मांगने पर मजबूर कर दिया गया है या जो किसी और कारण से विपत्ति में हैं, शिक्षा, प्रशिक्षण और पुनर्वास की सुविधाएं दी जाएंगी और समाज के उपयोगी नागरिक बनने में उनकी सहायता की जाएगी।

बच्चों के लिए सेवाओं की व्यवस्था करते समय उनके पारिवारिक वातावरण में सुधार करने के लिए प्रयास किए जाएंगे ताकि एक सामान्य पारिवारिक पड़ोस और सामाजिक वातावरण में ही बच्चों का उनकी पूरी क्षमताओं के साथ विकास हो सके।

समन्वित बाल विकास सेवाएं

राष्ट्रीय नीति में गर्भवती और स्तनपान कराने वाली स्त्रियों को सेवाएं सुलभ करने पर दिए गए विशेष बल तथा योजना आयोग द्वारा गठित अन्तर-मंत्रालय राज्य बोर्डों की सिफारिशों के आधार पर बच्चों को शुरू से ही सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए एक समन्वित नीति अपनाई गई और समन्वित बाल विकास सेवाओं (आई सी डी एस) का एक माडल तैयार किया गया। समन्वित बाल विकास सेवाओं का कार्यक्रम छह वर्ष तक की आयु के बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य के स्तर में सुधार लाना है।

आई सी डी एस परियोजना के क्षेत्रों में बच्चों, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली स्त्रियों को पूरक पोषक आहार, रोग से प्रतिरक्षण, स्वास्थ्य जांच, गंभीर मामलों में उच्च चिकित्सा संस्थानों में भेजने, पोषण और शिक्षा व अनौपचारिक शिक्षा संबंधी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती हैं।

पूरक पोषक आहार कम आय वाले परिवारों के छह वर्ष से कम आयु वाले बच्चों, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली स्त्रियों को दिया जाता है। छह वर्ष से कम आयु वाले बच्चों का पता लगाया जाता है और उनकी आयु और भार के आधार पर पूरक आहार देने के लिए उनकी सूची तैयार की जाती है। इसमें स्थायीयरूप से उपलब्ध आहार को प्राथमिकता दी जाती है।

पूरक पोषक आहार वर्ष में 300 दिन दिया जाता है। गम्भीर कुपोषण की स्थिति में आरोग्यकर आहार भी दिया जाता है।

स्त्रियों की देखभाल

पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा की सुविधाएं 15 से 45 वर्ष के आयु वर्ग की सभी स्त्रियों को दी जाती हैं। गर्भवती और स्तन्यपान कराने वाली स्त्रियों को प्राथमिकता दी जाती है। जिन स्त्रियों के बच्चे कुपोषण या रोगग्रस्त रहते हैं, उन्हें विशेषतौर पर अधिक समय तक के लिए पोषक आहार दिया जाता है। स्वास्थ्य और पोषण संबंधी शिक्षा का जन संचार माध्यमों, आंगनवाड़ी के कार्मिकों द्वारा घर-घर जाकर जानकारी देने के विशेष अभियानों, विशेष रूप से आयोजित अल्पावधि के पाठ्यक्रमों, विभिन्न चीजों को पकाने और बच्चों के खानपान के बारे में प्रदर्शन कार्यक्रमों के माध्यम से प्रसार किया जाता है।

आंख की परीक्षा करते हुए

स्वास्थ्य जांच सेवाएं

स्वास्थ्य जांच सेवाओं में गर्भवती स्त्रियों की प्रसव से पूर्व और स्तन्यपान कराने वाली स्त्रियों की प्रसव के बाद तथा छह वर्ष से कम आयु के बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल की जाती है। गर्भवती स्त्रियों को टिटनेस के बचाव के लिए टीका लगाने के अलावा ताकत के लिए विभिन्न गोलियां और प्रोटीन दिया जाता है। कम से कम चार बार स्वास्थ्य की जांच की जाती है। जिन महिलाओं को गम्भीर खतरा होता है उन्हें विशेष देखभाल के लिए उच्च स्तर के चिकित्सा संस्थानों में भेज दिया जाता है। घर पर जाकर जांच करना इस कार्य-नीति का एक आवश्यक अंग है। कम से कम एक-दो बार घर जाकर स्त्री के स्वास्थ्य की जांच की जाती है उसे बच्चे को स्तन्य-पान कराते समय तथा उसकी देखभाल के

लिए आवश्यक बातें व्यावहारिक रूप से समझाई जाती हैं। 6-8 सप्ताह के बाद प्रसवोत्तर जांच के लिए माता को स्वास्थ्य केन्द्र में बुलाया जाता है। छह वर्ष से कम बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल के अंतर्गत उनके पोषण स्तर पर बड़ी निगरानी रखने के लिए समय-समय पर उनका वजन तोला जाता है; रोगों से बचाव के लिए विभिन्न टीके लगाए जाते हैं, उनमें किसी रोग या कुपोषण आदि का पता लगाने के लिए 3-6 महीने की अवधि में सामान्य जांच की जाती है, पेचिश, दस्तों आदि की चिकित्सा की जाती है, कृमि संक्रमण को रोकने, विटामिनों की कमी तथा रक्तक्षीणता को दूर करने के लिए दवाइयां दी जाती हैं।

उपेक्षित बच्चों की देखभाल

आई. सी. डी. एस. की परियोजना के क्षेत्र का निर्धारण करने वाली प्रशासनिक इकाई ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक विकास खंड, आदिवासी क्षेत्रों में आदिवासी विकास खंड और शहरी क्षेत्रों में गन्दी बस्तियों के कुछ समूह होते हैं। परियोजना के क्षेत्र निर्धारित करते समय जहां आदिवासियों, अनुसूचित जातियों की बहुलता वाले क्षेत्रों, पिछड़े क्षेत्रों, सूखे की संभावना वाले क्षेत्रों, पोषण की कमी वाले क्षेत्रों और कम सामाजिक सेवाओं वाले क्षेत्रों को प्राथमिकता दी जाती है। शहर की परियोजनाओं में केवल गन्दी बस्तियों में ही यह योजना लागू की जाती है। शहरी या ग्रामीण परियोजना क्षेत्र की जनसंख्या लगभग 35 हजार होती है। ग्रामीण परियोजना में गांवों की संख्या 100 हो सकती है जबकि आदिवासी परियोजना में, उनके अगम्य प्रदेशों को ध्यान में रखते हुए, गांवों की संख्या 50 भी हो सकती है।

आंगनवाडी योजना

एक आंगनवाड़ी (बाल विकास केन्द्र) गांवों में या शहर की गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों के बच्चों और उनकी माताओं को सेवाएं उपलब्ध कराने का मुख्य केन्द्र होता है। एक आंगनवाड़ी ग्रामीण/शहरी क्षेत्रों में 1000 जनसंख्या के पीछे और आदिवासी इलाकों में 700 लोगों के पीछे होती है। इसका संचालन आंगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है। आमतौर पर स्थानीय महिला ही इनकी देखरेख का काम करती है जिसका चुनाव परियोजना स्तर के अधिकारी और गैर-अधिकारी स्तर के सदस्यों की एक समिति करती है। इस अवैतनिक कार्यकर्ता को आनरेरियम के रूप में कुछ राशि दी जाती है।

आम जनता का योगदान

बाल विकास कार्यक्रमों में स्वयंसेवी संस्थाओं, स्थानीय निकायों, पंचायती राज संस्थाओं और समाज के अधिक से अधिक लोगों का सहयोग प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं। इस उत्तरदायित्व को संभालने और इस कार्यक्रम में समाज का सहयोग प्राप्त करने में महिला मंडलों से बड़ी आशाएं हैं। इस कार्यक्रम के क्षेत्र का प्रसार करने का भी प्रस्ताव है ताकि इसके अंतर्गत विकलांग व निराश्रित बच्चों, शोषित और पथ से भटक जाने वाले बच्चों को भी सहायता की जा सके। □

हे राष्ट्र पिता! तुमको प्रणाम, शत-शत प्रणाम !!

सुख वैभव को लात मार कर
कंटक पथ अपनाने वाले
हे महा यति ! तुमको प्रणाम, शत-शत प्रणाम !!
सत्य संजोया बचपन से सपनों में
कथनी करनी एक बनी नयनों में
हर मानव का दर्द समझने वाले—
हे दीन बन्धु ! तुमको प्रणाम, शत-शत प्रणाम !!
मार्ग अहिंसा बनी सहारा तेरा
झंझा (ब्रिटिश राज) में भी चला इशारा तेरा
स्वतन्त्रता का दीप जलाने वाले—
हे काल पुरुष ! तुमको प्रणाम, शत-शत प्रणाम !!
पर्वत की ऊंचाई लिए अरमान तेरे
सागर की गहराई लिए पैगाम तेरे
सोता देश जगाने वाले—
हे दिग्विजयी ! तुमको प्रणाम, शत-शत प्रणाम !!

राकेश अग्रवाल 'सुधांशु'
नेहरू गेट, बुर्ज मोहल्ला,
हापुड़ (उ. प्र.)।

शानदार अतीत का धनी भारत

ब्रजलाल उनियाल

मेरे बाप ने घी खाया था, मेरा पहुंचा पकड़ो वाली मसल हम भारतीयों पर लागू होती है। हमारी गणना आज संसार के सबसे गरीब दस देशों में की जाती है। हमारा सर शर्म से झुक जाता है जब हम देखते हैं कि हमारा भारत कितने गौरव-पूर्ण अतीत का धनी था। और आज दुनिया के गए-गुजरे देशों में हमारी गणना की जाती है। पर क्या इस तरह गाल बजाने से हमें कोई लाभ होगा? सम्भवत: मानव की यह प्रवृत्ति है कि वह अपने अतीत से प्रेरणा लेता है और जब कभी उसे वर्तमान पर झुंझलाहट होती है तो वह अतीत को याद कर पुलकित होता है और प्रेरणा पाता है।

संसार के सबसे गरीब देशों में होने के बावजूद इस युग में भी इस देश ने जगदीश चन्द्र बसु और चन्द्रशेखर वेंकटरमन जैसे विश्व विश्रुत वैज्ञानिक संसार को दिए। पर संसार में दूसरी संस्कृतियां जब अंकुरित भी नहीं हुई थीं, यूरोप के लोग कपास को पेड़ों पर उगने वाली ऊन कहा करते थे, तब भी भारत में सूतीवस्त्र पहने जाया करते थे। आचार्य विनोबा भावे का कहना है कि वेद में ऋषि गृत्समद का वर्णन है जिनका सम्बन्ध कपास से बताया जाता है। कहा जाता है कि गृत्समद शब्द से ही गोसिपियम शब्द की उत्पत्ति हुई। गृत्समद यवतमाल जिले के कलम्ब गांव के रहने वाले थे। उक्त लैटिन शब्द गार्त्सदम से ही बना है।

इस बात के तो पक्के प्रमाण नहीं मिलते हैं कि वेदों में भी आधुनिक विज्ञान को बीज रूप से पाया जाता है पर इसमें संदेह नहीं कि वेदों में रेखागणित, बीजगणित, आयुर्वेद तथा अन्य विज्ञानों का उल्लेख है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में कुछ ऐसे शब्द भी मिलते हैं जो हमें प्रेरित करते हैं कि हम उनका सही परिप्रेक्ष्य में अर्थ समझें। इन शब्दों में कुछ हैं भुशुण्डी, शतघ्नी (सौ आदमियों को एक साथ मारने वाला अस्त्र), अग्निबाण, विमान आदि।

भाषा और विज्ञान

संस्कृत भाषा की गरिमा का पता तो ईसा से छ:सौ साल पहले बने पाणिनी के व्याकरण से चलता है। व्याकरण में ही ऐसे शब्द मौजूद हैं जो इस बात के गवाह हैं कि हमारे पूर्वजों की विज्ञान में कितनी पैठ थी। ''पादप'' शब्द का अर्थ है पैरों से पीने वाला यानी वृक्ष आदि पैरों से द्रव रूप में नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश आदि के रूप में भोजन ग्रहण करते हैं। इस बात का पता यूरोपी वैज्ञानिक सैकड़ों साल बाद लगा सके। उन्नीसवीं सदी में हवा के नष्ट न होने और उसे पकड़ने के बारे में प्रयोग सफल हुए। बोस और मार्किनी के सफल प्रयोगों से दुनिया चमत्कृत हुई पर पाणिनि ने पहले ही ''अक्षर'' नाम देकर यह बता दिया था कि ध्वनि नष्ट नहीं होती बल्कि उस की तरंगें फैलती रहती हैं।

शिक्षा की उच्च परम्परा

विश्व में जब शिक्षा की उच्च परम्परा का जन्म ही नहीं हुआ था तब तक्षशिला विश्वविद्यालय 700 ईसा पूर्व से लेकर छठी सदी तक बराबर उन्नति करता रहा। हूणों के आक्रमण के बाद यह बर्बाद हो गया। नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना गुप्त काल में हुई थी। इस विश्वविद्यालय के सिंहद्वार पर लिखा था ''क्रोध को क्षमा से मारो, दोष को उपकार से और असत्य को सत्य से जीतो''। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भी यहां कुछ समय बिताया था, जो छात्र यहां दाखला लेना चाहते थे उनका साक्षात्कार सबसे पहले द्वार पर बैठा एक पंडित किया करता था। वह पंडित वेद, वेदांग और सांख्य के प्रश्न पूछता था। असफल छात्रों को वापस लौटना पड़ता था। इसमें एक समय तो लगभग 10 हजार विद्यार्थी शिक्षा पाते थे और शिक्षक थे डेढ़ हजार। आजकल वैज्ञानिक शिक्षण प्रणाली में अध्यापकों और छात्रों का आदर्श अनुपात 1 और 7 होता है जो उस समय था। नालंदा विश्वविद्यालय 1200 ईसा तक कायम रहा। उस समय तक संसार भर में इनके मुकाबले के अन्य विश्वविद्यालय नहीं थे। आधुनिक विश्वविद्यालयों में तो सबसे पहला विश्वविद्यालय इटली में स्थापित हुआ।

ज्योतिष शास्त्र व गणित

सूर्य सिद्धान्त में पाई यानी 22/7 का मान तीन दशमलव स्थानों तक सही सही यानी 3.143 लिखा गया है। उसके अनुसार साल में 365 दिन 6 घंटे 12 मिनट 36.6 सैकिंड बताए गए हैं। वर्तमान गणना से यह थोड़ी ही भिन्नता रखता है। इसी प्रकार पाइथोगोरस के सिद्धान्त को बिल्कुल स्पष्ट रूप से ''लीलावती'' में बताया गया है। शून्य का आविष्कार भारतीयों ने ही किया था। अरब लोगों ने हिन्द से संख्याओं को सीखा और उन्हें हिन्दसे कहा। अरब लोगों से यूरोप ने इन्हें सीखा।

प्राचीन समय में बड़ी पेचीदा बातों को ''फार्मूला'' (सूत्र) रूप में कैसे बताया जाता है, यह पढ़कर तो दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है। उदाहरण के लिए, कलियुग में चार लाख बत्तीस हजार साल होते हैं और चारों युगों में मिलाकर तैंतालीस लाख बत्तीस हजार साल होते हैं। इसे ''आर्यभट्ट'' ने एक सूत्र ''ख्युघृ'' में

इस प्रकार बताया है। "स्युष" को इस प्रकार समझा जाए :--

ख = 2
य = 30
उ = 100^2
ष = 4
ऋ = 100^3
अर्थात् ष = 40,00,000
स्यु = 3,20,000

इस प्रकार का जटिल सूत्र (फार्मूला) तो आज के वैज्ञानिकों को भी चमत्कृत कर देता है।

इसी प्रकार 24 घंटों के अहोरात्र को महर्षि वार्कली ने इस प्रकार कहा है :--

15 स्वेदायन = 1 लोमगर्त
15 लोमगर्त = 1 निमेष
15 निमेष = 1 अन
15 अन = 1 प्राण
15 प्राण = 1 इदम्
15 इदम् = 1 एतर्हि
15 एतर्हि = 1 क्षिप्र
15 क्षिप्र = 1 मुहूर्त
30 मुहूर्त = 1 अहोरात्र

अर्थात 24 घंटों में कुल 76 अरब 88 करोड़ 57 लाख 18 हजार 750 स्वेदायम होते हैं। अर्थात् महर्षि ने 1 सेकिंड को आठ लाख हिस्सों में बांटा था। है कोई माई का लाल जो इसकी सूक्ष्म गणना का रहस्य उद्घाटित कर सके? क्या कोई बुद्धिविलास था या कि किन्हीं ठोस परीक्षणों पर आधारित परिणाम? जरूरत है इन तथ्यों का पता लगाया जाए।

गणित में वर्ग और वर्गमूल निकालने और यहां तक कि त्रिकोणमिति के भी प्रश्न मिलते हैं। प्राचीन वेधशालाएं भी ग्रहों की स्थिति की जानकारी देने का उत्तम व उपयोगी माध्यम है।

चिकित्सा

सुश्रुत और चरक के नाम तो हमारे चिकित्सा शास्त्र में अविस्मरणीय हैं। उन्होंने बीमारियों के भेद-उपभेद, सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन, चिकित्सा, उपचार आदि का जो विस्तृत वर्णन किया है वह आज भी स्पृहणीय है। पर भारत ने मानवीय मूल्यों को हमेशा ऊंचा दर्जा दिया यही कारण है कि चरक और सुश्रुत ने चिकित्सा के विद्यार्थियों के अपेक्षित गुणों का भी विशद वर्णन किया है। इन्होंने बताया है कि विद्यार्थियों में शान्त स्वभाव, सौजन्य, युक्तिसंगति, स्मरणशक्ति, आडंबरहीनता, अध्ययनशीलता, सर्वभूत हितभाव, विज्ञान प्रदर्शन, मृदुभाषण आदि आदि गुण हों। अगर आज इस कसौटी पर हम डाक्टरों को कसने लगें तो कितने खरे उतरेंगे? क्या आज के मेडीकल के विद्यार्थियों को भी ऐसा पढ़ाया जाता है?

विज्ञान

भारत के बहुत से वैज्ञानिकों ने विज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसका विस्तृत उल्लेख आचार्य 'रे' ने भारतीय रसायन शास्त्र का इतिहास में किया है। अभी तक वैज्ञानिकों को इस बात पर आश्चर्य होता है कि दिल्ली का लौह स्तम्भ किन धातुओं का मिश्रण है और उसकी गहराई कितनी है।

आइन-ए-अकबरी में साधारण पदार्थों के अपेक्षित घनत्व के बारे में उल्लेख मिलता है। लगभग उसी समय यूरोप में भी इसका उल्लेख है। इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि अकबर यंत्रों के निर्माण, बन्दूक बनाने, धातु-शोधन और कीमियागीरी में बहुत दिलचस्पी लेता था और उसके समय में इन पर काम भी किए गए।

योग और अध्यात्म

इसमें तो दो राय हैं ही नहीं कि भारत योगसिद्धियों में अद्वितीय रहा है और अब भी है। अब भी यहां ऐसे योगी मौजूद हैं जो पृथ्वी के गर्भ में महीनों रह सकते हैं और विज्ञान को चकमा देते रहे हैं।

अध्यात्म में तो आज भी भारतीय परम्परा की संसार भर में प्रतिष्ठा है। यही कारण है कि अमेरिका जैसे देश में भी भारतीय अध्यात्म के पीछे दीवानों ने कई संस्थाएं खोली हैं।

साहित्य

साहित्य में तो भारत का कहना ही क्या। संसार का सबसे प्राचीन साहित्य वेद हैं। संस्कृत साहित्य की वैज्ञानिकता का लोहा दुनिया मानती है। जैसे लिखा जाता है वैसे ही पढ़ा जाता है। साहित्य में कालिदास की रचनाओं का दुनिया भर के काव्यों में उच्चतम स्थान है। संस्कृत साहित्य के बारे में तो कुछ भी कहना सूर्य को दीपक दिखाना जैसा है। पाश्चात्य विद्वानों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है, पर हम उनकी प्रशंसा के कायल नहीं हैं।

सर्व धर्म समभाव

यही वह देश है जिसमें सम्राट अशोक जैसे महान शासकों ने सर्वधर्म समभाव को अपने जीवन में मूर्तरूप दिया। आधुनिक भारत का मसीहा गांधी तो उस परम्परा का अग्रगण्य पुरुष-पुंगव था।

सम्राट अशोक ने अपनी शिक्षाओं में जहां दया, दान, सत्य, शौच पर जोर दिया वहां यह स्पष्ट लिखा है कि अपने धर्म का पालन करते हुए दूसरे धर्म का सम्मान करो।

मनुष्य से कोई भी श्रेष्ठ नहीं है अर्थात् मानव को सबसे अधिक महत्व दो, यह महाभारत के शान्तिपर्व में लिखा है। इसका भाव यही है कि धर्मसम्प्रदाय के झगड़े झूठे, सच्चा है मानवप्रेम।

प्राचीनतम उद्बोधन

और अन्त में सबसे पुराने ग्रन्थ के हवाले से उपसंहार करते हैं :--

अज्येष्ठासो अकनिष्ठासो एते संभ्रातरो
वा वृधुः सौभगाय ।
युवापिता स्वपा रुद्र एषां सुदुधा पृश्निः-
सुदिना मरुद्भ्यः ।।

5/60/5 ऋग्वेद

जग में छोटा-बड़ा न कोई सब हैं भ्राता ।
ईश्वर सबका पिता धरती है माता ।।
एक पिता के पुत्रों से सब मिलो परस्पर ।
स्वर्गों का ऐश्वर्य उतारो इस भूतल पर ।।

(अनुवाद--बशीर अहमद मयूख)

एक मुसलमान भाई की प्रतिभा के स्पर्श ने वैदिक वाङ्मय के इस अनुवाद में कितना लालित्य भर दिया है।

अन्त में महाभारत के आदि पर्व का यह श्लोक इस प्रसंग में समीचीन है :--

"यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।"

जो यहां है वह अन्यत्र भी है पर जो यहां नहीं है वह तो कहीं भी नहीं है। □

पशुधन का विकास

[इस लेख में भारत की अर्थव्यवस्था में पशुधन के महत्व को दर्शाते हुए बताया गया है कि पशुओं की नस्ल सुधारने, संकर प्रजनन, पशुओं की चिकित्सा तथा उनके लिए अच्छा चारा उपलब्ध करने के लिए अब तक क्या-क्या उपाय किए गए हैं।]

हमारे देश की कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में भूमि के बाद सबसे अधिक महत्व गाय-भैंस जैसे मूल्यवान पशुओं का है। अर्थव्यवस्था में उनके इस महत्व को देखते हुए राष्ट्रीय योजनाओं में पशुधन के विकास को उच्च प्राथमिकता दी गयी है। यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में करीब 22.8 करोड़ पशु हैं। इनमें से केवल 15 प्रतिशत ही बढ़िया नस्ल के हैं। वैसे हमारे यहां कुछ उत्कृष्ट नस्ल की गायें और दुधारु भैंसे भी हैं परन्तु ज्यादातर पशुओं की उत्पादकता काफी कम है। पिछले कुछ अर्से में गाय और भैंस के विकास में काफी अच्छी प्रगति हुई है।

पशुधन के विकास के लिए सबसे अधिक जरूरी उनकी नस्ल को सुधारना है। इस दृष्टि से पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान जमे हुए वीर्य प्रौद्योगिकी के उपयोग की शुरुआत हुई। हैसरघट्टा (बंगलोर) में एक वीर्य उत्पादन व प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की गयी है। अब देश के अधिकांश प्रमुख राज्यों में इस तरह के वीर्य केन्द्र बन गए हैं। जमे हुए वीर्य का उपयोग करके अच्छी नस्ल के पशु तैयार किए जाते हैं।

बढ़िया नस्ल के सांड़ों को तैयार करने के लिए पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक देश में 4000 वयस्क गायों वाले कुल 42 विदेशी पशु प्रजनन फार्म बनाए गए थे। इनके अलावा प्रचुर दुग्ध योजना के प्रथम चरण में एक दर्जन "बुल मदर फार्म" बनाए गए। भारतीय एग्रो इंडस्ट्रीज फाउन्डेशन ने भी उरलिकंचन में एक विदेशी पशु प्रजनन फार्म की स्थापना की है। इनके लिए जैबू पशु की रेड सिन्धी और थारपारकर नस्लों, विदेशी नस्लों की जर्सी और होलेस्टियन फ्रीसियन और भैंसों की मुर्राह और सुरती नस्लों के लिए सात केन्द्रीय पशु प्रजनन फार्मों की भी स्थापना की गयी है।

बैलों के बिना आज भी किसान का काम नहीं चल सकता

संकर पशुओं का प्रजनन

मूल ग्राम खंडों और सघन पशु विकास परियोजनाओं के माध्यम से भी पशु विकास पर ध्यान दिया जा रहा है। यह कार्यक्रम पिछली योजनाओं में शुरु किया गया था और पांचवीं पंचवर्षीय योजना से इस पर अधिक जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम में बेहतर प्रजनन, उन्नत आहार, प्रभावी रोग नियंत्रण और संगठित विपणन सुविधाओं आदि पर जोर दिया जाता है। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अंत में देश के विभिन्न भागों में 97 सघन पशु विकास परियोजनाएं और 600 मूल ग्राम खंड चल रहे थे। इन परियोजनाओं में लगभग 12,000 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों के माध्यम से करीब 150 लाख गोजातीय पशुओं को शामिल कर लिया गया है।

अनेक राज्यों ने संकर पशुओं के प्रजनन में महत्वपूर्ण प्रगति की है। इनमें केरल का नाम उल्लेखनीय है। वहां 62.5 प्रतिशत ब्राउन स्विस वंशानुक्रम क्षमता वाली अधिक उत्पादक सुनन्दिनी प्रजाति का विकास किया गया है।

ग्रामीण समुदाय के कमजोर वर्ग के लोगों की मदद के लिए राष्ट्रीय कृषि आयोग ने कई सिफारिशें की थीं। उन्हें ध्यान में रखते हुए पांचवीं योजना के दौरान विशेष पशुधन विकास कार्यक्रम शुरु किया गया था। इनमें 90 परियोजनाओं के माध्यम से प्रत्येक जिले में 5 हजार लाभार्थियों को उनकी आमदनी बढ़ाने और आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए 4 से 28 माह तक अर्थात् प्रथम ब्यांत तक के संकर प्रजनित औसरों का पालन करने के लिए राज-सहायता देने का निश्चय किया गया।

छठी योजना में हिमित वीर्य के उपयोग की तकनीक से अधिक पशु और भैंसों के विकास में तेजी लाने का बड़ा कार्यक्रम शुरु किया गया है ताकि कृषकों को उनके पशुओं की उत्पादकता में सुधार लाने के

लिए अधिक कारगर सेवाएं उपलब्ध हो सकें। कुल मिलाकर 18 हिमित वीर्य केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। इसके अतिरिक्त 54 हिमित वीर्य बैंक भी बनाए जाएंगे।

पशु चिकित्सा सुविधाएं

पशुधन के विकास के लिए एक अन्य आवश्यकता पशु चिकित्सा सुविधाओं की है। पांचवीं योजना की शुरुआत के पहले लगभग 2000 हजार पशु चिकित्सा केन्द्र काम कर रहे थे। इनकी संख्या 1979-80 तक बढ़कर 12,268 हो गयी है। इस तरह के अस्पतालों के अलावा पांचवीं योजनावधि के अंत तक 440 चलते-फिरते पशु चिकित्सा यूनिट और 7000 से अधिक पशु चिकित्सा सहायता केन्द्रों ने काम भी शुरू कर दिया है। पशुओं की महामारी रिण्डरपेस्ट के प्रकोप में भी कमी आयी है। पहले पशु संख्या के 196 प्रति लाख पर प्रकोप होता था जो कम होकर केवल एक प्रति लाख रह गया है। पांचवीं योजना के दौरान खुरपका और मुंहपका रोग को नियंत्रण करने के लिए काम शुरू किया गया। इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय बंदरगाहों पर संगरोध केन्द्रों की स्थापना करके पशुओं के आयात के साथ संक्रमण को फैलने से रोकने के लिए भी कार्रवाई की गयी है। पशु प्लेग संक्रमण को समूल नष्ट करने के लिए टीका लगाने के कार्यक्रम को और तेज किया जाएगा।

पशुओं के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए देश में लगभग 12,268 अस्पताल हैं। ठीक समय पर पशु चिकित्सा उपलब्ध कराने के लिए छठी योजना में 2500 नए चिकित्सा संस्थान स्थापित किए जाएंगे। टीकों का उत्पादन भी बढ़ाया जाएगा।

चारा उत्पादन योजनाएं

पशुओं के विकास के लिए एक अन्य जरूरी चीज है चारा। चारे के उत्पादन और संरक्षण के बारे में नयी प्रौद्योगिकी का प्रसार करने के लिए भारत सरकार ने चारा उत्पादन प्रदर्शन के सात केन्द्र बनाए हैं। ये केन्द्र हिसार (हरियाणा), कल्याणी (पश्चिम बंगाल), हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश), आवडी (तमिलनाडु), गांधीनगर (गुजरात), सूरतगढ़ (राजस्थान) और शेहामा (जम्मू और कश्मीर) में स्थापित किए गए हैं। चारा उत्पादन प्रौद्योगिकी में व्यापक प्रदर्शन शुरू करने के अतिरिक्त ये केन्द्र चारे की अधिक उत्पादनशील किस्मों के आधार बीजों के उत्पादन और राज्य सरकार के क्षेत्रीय स्तर के अधिकारियों तथा किसानों के लिए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम आयोजित करते हैं। चारे की फसलों के लिए बढ़िया बीजों की कमी को दूर करने की व्यवस्था भारत सरकार ने आस्ट्रेलिया के सहयोग से हैसरघट्टा (कर्नाटक में एक बड़ा चारा बीज उत्पादन फार्म स्थापित किया है। इस तरह का असम में एक फार्म बनाने का प्रस्ताव है। इन केन्द्रों में आधार और प्रामाणिक बीजों का उत्पादन होगा जिनकी बहुत आवश्यकता है।

छठी योजना के दौरान विद्यमान चरागाहों को सुधारने और उनके समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए भी कदम उठाए जाएंगे। इस कार्यक्रम पर आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान और अन्य राज्यों में विशेष बल दिया गया है।

पशु विकास अनुसंधान के क्षेत्र में भी काफी काम हो रहा है। इसके लिए देश में एक सुदृढ़ बुनियादी ढांचा और व्यवस्था मौजूद है। इसमें भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, कृषि विश्वविद्यालयों के पशु विभाग शामिल हैं। ये संस्थाएं पशु उत्पादन के विभिन्न पक्षों अर्थात् पशु प्रजनन, उत्पादन, पोषण, स्वास्थ्य और डेरी उद्योग आदि पर अनुसंधान कार्य करती हैं। अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान प्रायोजना के अंतर्गत व्यापक स्तर पर, विदेशी जनन द्रव्य का प्रयोग करते हुए अधिक उत्पादन देने वाले वाणिज्यिक रूप से व्यावहारिक डेरी पशुओं के लिए अनुसंधान का एक नियोजित कार्यक्रम चलाया गया। यह प्रायोजना छः केन्द्रों पर चलायी जा रही है। इसमें तीन विदेशी नस्लों अर्थात होल्सटिन फ्रीसियन, जर्सी और ब्राउन स्विस का प्रयोग किया जा रहा है। इन अनुसंधानों के कुछ उत्साहवर्धक परिणाम निकले हैं। इस प्रायोजना के केन्द्र राहुड़ी (महाराष्ट्र), जबलपुर (मध्य प्रदेश), हिसार (हरियाणा), गुन्टूर (आन्ध्र प्रदेश), के निकट लाभ फार्म, हरिनघाटा (पश्चिम बंगाल) और इज्जत नगर (उत्तर प्रदेश) में हैं। इनका लक्ष्य ऐसे डेरी पशुओं का विकास करना है जो प्रति ब्यान्त 3200 लिटर ऐसा दूध दें जिसमें वसा की मात्रा 3.5 प्रतिशत से अधिक हो। राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल में संकरण पर किए गए अनुसंधान कार्य के फलस्वरूप डेरी पशुओं की कुछ नयी प्रजातियों का विकास किया गया है।

उष्मा रोधी, रोग रोधी तथा मामूली आहार का उपयोग करने के लिए सक्षम नस्ल का विकास करने के लिए भारत की साहीवाल नस्ल का संकरण अमेरिका से आयातित भूरे स्विस सांडों से किया गया जिसका उद्देश्य प्रति ब्यान्त 5000 से 7000 लिटर दूध उत्पादन प्राप्त करना था। प्रथम पीढ़ी में संकरित गाय का दूध 3715 लिटर तक बढ़ा जबकि साहीवाल का 2195 लिटर होता है। साहीवाल नस्ल की पूरी उम्र ब्यान्तों की औसत संख्या छः है जबकि नई प्रजनित तथा विकसित गाय की कुल ब्यान्त संख्या दस है। पूरे जीवन में उत्पादन संकरित नस्ल का दूध साहीवाल की तुलना में 150 प्रतिशत अधिक हुआ है। इस प्रायोजना के फलस्वरूप राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान में लगभग 200 ऐसी अधिक दूध देने वाली गायें उपलब्ध हैं। करनाल के आसपास के गांवों में स्वयं किसानों द्वारा संकरित नस्लों का उत्पादन किया गया है। एक अन्य अधिक दूध देने वाली नस्ल अर्थात् करन स्विस का विकास भी शुरू किया गया जिसके लिए अमेरिका की होल्सटिन फ्रीसियन नस्ल तथा भारत की थरपारकर नस्ल का प्रयोग किया गया। इन संकरित नस्लों ने प्रति ब्यान्त औसतन 4000 लिटर दूध दिया।

कृत्रिम गर्भाधान प्रौद्योगिकी में सुधार लाने के लिए भारत पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जत नगर, राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल और अनेक कृषि विश्वविद्यालयों में अध्ययन किए गए और जमाए हुए वीर्य की प्रौद्योगिकी अपना ली गयी है।

भैंसों के वीर्य को जमाने की तकनीक का भी विकास किया गया है जिससे कि अच्छे सांडों के वीर्य की मूल्यांकन करने के बाद उस समय तक प्रतिरोपण क्षमता बनाई रखी जा सके जब तक कि उसकी आवश्यकता पड़े। □

छोटे उद्योगों से ही

गरीबी निवारण सम्भव

आप आन्ध्र प्रदेश के करीमनगर जिले के रहने वाले हैं? या आप जम्मू व कश्मीर के बारामूला जिले के निवासी हैं? चाहे आप गुजरात के मेहसाना जिले के बाशिन्दे हों या पश्चिम बंगाल के जलपाईगुड़ी जिले के, यदि आप में उद्यम की भावना है तो आप कोई भी लघु उद्योग शुरू करके देश की समृद्धि में भाग ले सकते हैं। इतना तो आप जानते ही हैं कि लघु उद्योग श्रम प्रधान हैं और, बड़े उद्योगों की तुलना में, इनमें बहुत थोड़ी पूंजी लगानी होती है।

कुछ वर्ष पहले की स्थिति आज से भिन्न थी। आप लघु उद्योग लगाना चाहते थे और आपको ऋण, कच्चा माल, बिजली, जमीन आदि के लिए कई कार्यालयों के पास दौड़ना पड़ता था। अधिकांश कार्यालय तो आपके जिले में थे ही नहीं। आपको कई जिलों, बड़े नगरों और यहां तक कि राज्यों की राजधानियों में जाकर विभिन्न अधिकारियों के पास चक्कर काटने पड़ते थे। बहुत सारे लोगों के लिए, इसी कारण, लघु उद्योग शुरू करना बहुत बड़े झंझट के समान था।

आज सरकार, जिला उद्योग केन्द्र की मार्फत, आपको लघु एवं ग्रामीण उद्योग स्थापित करने के लिए आवश्यक सभी सेवाएं और सुविधाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध करा रही है। ये केन्द्र आपकी जरूरत के अनुसार आपके लिए योजना का चयन करते हैं, व्यवहार्यता प्रतिवेदन तैयार करते हैं, मशीनों एवं अन्य साज-सामानों के साथ ही कच्चे माल की व्यवस्था और सबसे ऊपर ऋण-सुविधाएं भी उपलब्ध कराते हैं। इस समय देश भर में कुल 382 जिलों में जिला उद्योग केन्द्र कार्यरत हैं जो 392 जिलों में लघु उद्योगों को सहायता पहुंचा रहे हैं। ज्ञातव्य है कि देश में कुल 406 जिले हैं।

जिला उद्योग केन्द्र का कार्यक्रम, लगभग तीन वर्ष पहले, पहली मई, 1978 को शुरू किया गया था ताकि विशेषरूप से पिछड़े क्षेत्रों में लघु उद्योगों और ग्रामीण दस्तकारों को सहायता पहुंचाई जा सके। अब तक होता यह आया था कि लघु उद्योग विकास कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न सुविधाओं का लाभ अपेक्षतया ऐसे समृद्ध लोगों को ही मिला करता था जिन्होंने लघु क्षेत्र में समुन्नत जिन्सों के कारखाने लगाये थे। लेकिन, सरकार वास्तव में ग्रामीण क्षेत्रों में समाज के कमजोर वर्ग को सहायता पहुंचाना चाहती थी ताकि वे अपनी आर्थिक दशा सुधारने के साथ-साथ उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाने, उनकी कीमतों में कमी करने और राष्ट्रीय आय के समान वितरण में योगदान कर सकें।

वस्तुतः जिला उद्योग केन्द्र भारत सरकार की केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना है, जिसे राज्य सरकारों द्वारा कार्यान्वित किया जा रहा है। इन केन्द्रों के कार्य-कलापों पर जिला स्तर, राज्य स्तर और क्षेत्रीय स्तर पर निगरानी रखी जाती है। वर्ष 1979-80 के दौरान, इन उद्योग केन्द्रों की मदद से, 1,96,772 नए एककों ने उत्पादन शुरू किया और इनसे 6.65 लाख लोगों को अतिरिक्त रोजगार के अवसर मिले। वर्ष 1980-81 में लगभग 3 लाख नये एककों में उत्पादन शुरू हुआ और तकरीबन 99 हजार लोगों को अतिरिक्त रोजगार मिला।

वास्तव में पिछले लगभग तीन दशक के योजनाबद्ध विकास के फलस्वरूप देश में उद्योगों का जितनी तीव्रगति से विकास हुआ है उतना पिछली एक शताब्दी में नहीं हुआ। विशेष रूप से, पर्याप्त संख्या में रोजगार के अवसर सृजित करने की दृष्टि से देश के पिछड़े और ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर और लघु उद्योग आर्थिक समृद्धि को समाज के कमजोर वर्गों तथा गरीबों के दरवाजों तक ले जाने का एक सशक्त माध्यम हैं, इसलिए लघु उद्योगों की तेजी से वृद्धि सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सरकार ने अत्यन्त लघु एककों के मामले में निवेश की सीमा बढ़ाकर दो लाख रुपये, लघु एककों के मामले में 10 लाख रुपये से बढ़कर 20 लाख रुपये और सहायक उद्योगों के लिए 15 लाख रुपये से बढ़ाकर 25 लाख रुपये कर दी है। सहायक साज-सामान का उत्पादन लघु या मध्यम क्षेत्र में किया जाए—सरकार की औद्योगिक लाइसेंस नीति का यही मुख्य उद्देश्य है। सहकारी समितियों तथा छोटे और मध्यम स्तर के उद्यमियों को उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। इतना ही नहीं, लघु उद्योगों और सहायक उद्योगों के लिए आरक्षण की नीति भी जारी है। सरकार ने इस क्षेत्र के कार्य-परिणामों और क्षमता को देखते हुए क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योगों की सूची बढ़ाकर 834 कर दी है।

सरकार सभी सरकारी खरीदों में लघु उद्योगों को प्राथमिकता देती है। इस प्रकार केवल लघु क्षेत्र से ही खरीद के लिए आरक्षित वस्तुओं की संख्या अब 379 हो गई है। इन उत्पादों पर पंद्रह प्रतिशत तक मूल्य-अधिमान भी दिया जाता

है। उदाहरण के लिए, सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों ने 1980-81 में 120 करोड़ रुपये के सामान लघु क्षेत्र से खरीदे।

पिछले कुछ वर्षों में लघु उद्योगों ने जबर्दस्त प्रगति की है। पिछले छः वर्षों के दौरान अर्थात् 1973-74 से लेकर 1979-80 तक इस क्षेत्र का उत्पादन 7,200 करोड़ रुपये मूल्य से बढ़ कर 19,060 करोड़ रुपये हो गया। अनुमान है कि वर्ष 1980-81 में लघु क्षेत्र में 28,080 करोड़ रुपये का उत्पादन हुआ।

इसी अवधि में इस क्षेत्र में रोजगार का अवसर 30.6 लाख से बढ़कर 64.6 लाख हो गया। निर्यात में भी इस क्षेत्र के योगदान में वृद्धि हुई है क्योंकि सरकार लघु उद्योगों द्वारा निर्मित उत्पादों के निर्यात-संवर्धन को पर्याप्त महत्व दे रही है। लघु क्षेत्र से वर्ष 1979-80 के दौरान लगभग 1,050 करोड़ रुपये मूल्य का निर्यात किया गया जोकि कुल निर्यात का लगभग 16 प्रतिशत है। वर्ष 1972-73 के 305.79 करोड़ रुपये के निर्यात के मुकाबले यह लगभग तिगुनी वृद्धि है।

जैसे-जैसे लघु उद्योगों की वृद्धि हो रही है, सरकार भी एक कदम आगे बढ़कर इन्हें प्रोत्साहित कर रही है। वाणिज्यिक बैंकों और अन्य संस्थानों से वित्तीय सहायता प्राप्त करने की प्रक्रिया और शर्तों को और उदार बना दिया गया है। पिछले तीन वर्षों में सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा लघु उद्योगों को दी गई अग्रिम राशियों में पर्याप्त वृद्धि हुई है। जहां जून, 1977 में कुल 1315.29 करोड़ रु. अग्रिम दिए गए थे वहां जून, 1979 में 2066.32 करोड़ रुपये दिए गए। सामग्री और अन्य साज-सामान के आयात के लिए विशेष सुविधाएं दी जा रही हैं। ऐसे अत्यन्त लघु एककों को विशेष प्रोत्साहन दिए जा रहे हैं, जो पचास हजार से कम आबादी वाले नगरों में अवस्थित हैं और जिनमें संयंत्र एवं मशीनरी के रूप में दो लाख रुपये से अधिक की पूंजी न लगाई गई हो।

लघु उद्योग अब उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन के साथ ही अत्यन्त आधुनिक और सूक्ष्मतम उत्पाद भी तैयार करते हैं जैसे इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली, माइक्रोवेव कलपुर्जे, विद्युत-चिकित्सा के उपकरण, टेलीविजन, आदि। वैसे, इस क्षेत्र में उत्पादन के लिए पहले से ही घरेलू बिजली उपकरणों एवं साज-सामानों, मोटरगाड़ियों के रेडिएटर, एस्प्रैसो पर्कोलेटर, टूथ पेस्ट, प्रेशर-कुकर, कंटैक्ट लैंस, टूथ ब्रश, चमड़ा एवं खेलकूद के सामान, हाकी, बाल, टाइपराइटर के रिबन आदि को सुरक्षित रखा गया है।

छठी पंचवर्षीय योजना में लघु उद्योग क्षेत्र के उत्पादन में 8.7 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। अनुमान है कि 1984-85 के अंत तक इस क्षेत्र में 32,873 करोड़ रुपये का उत्पादन-स्तर प्राप्त हो जाएगा। इसी प्रकार, निर्यात-मूल्य भी बढ़कर 1,850 करोड़ रुपये तक पहुंच जाने की आशा है। तब रोजगार का अवसर भी 1979-80 के 67 लाख से बढ़कर 1984-85 तक 89 लाख हो जाने की संभावना है।

लघु उद्योगों के विकास के लिए जो संगठन राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत हैं उनमें लघु उद्योग विकास संगठन और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम प्रमुख हैं। राज्य स्तर पर, राज्यों के उद्योग निदेशालय, लघु उद्योग विकास निगम और वित्त निगम लघु उद्योगों की तरह-तरह की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, जिनमें भूमि, ऋण, बिजली, किराया-खरीद आधार पर मशीनें, कच्चा माल तथा कुछ सीमा तक विपणन सेवाएं आदि सम्मिलित हैं।

राज्यों के उद्योग निदेशालयों या जिला उद्योग अधिकारी या जिला उद्योग केन्द्र के साथ पंजीकरण कराने के बाद कारखाने केन्द्र या राज्य सरकार के संगठनों से सुविधाएं प्राप्त करने के अधिकारी हो जाते हैं। लघु उद्योग विकास संगठन विकसित तकनीकी प्रणालियों, आधुनिक मशीनों और उपकरणों के प्रयोग, डिजाइन तैयार करने, मशीनों का खाका तैयार करने आदि के विषय में तकनीकी सलाह तथा उत्पादन के सभी पक्षों पर तकनीकी सहायता प्रदान करता है। लघु उद्योग विकास संगठन ने लघु उद्योग सेवा संस्थानों और इसकी शाखाओं के माध्यम से, 1980-81 के दौरान, 2 लाख 35 हजार 3 सौ लघु उद्योग एककों को प्रौद्योगिकी, प्रबंधकीय, आर्थिक और अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की। लगभग 47,804 एककों का मौके पर जाकर मार्गदर्शन किया गया और 1,44,512 एककों को विस्तार केन्द्रों के द्वारा सहायता दी गई। संगठन वर्तमान और भावी लघु उद्यमियों के लाभ के लिए तकनीकी, प्रबंधकीय, निर्यात संबंधी और औद्योगीकरण के अन्य पहलुओं से संबंधित विभिन्न प्रशिक्षण पाठ्यक्रम भी आयोजित करता है। ये पाठ्यक्रम इंजीनियर उद्यमियों के लिए भी चलाए जाते हैं।

राज्य वित्त निगम लघु उद्योगों को मध्यावधि और दीर्घावधि ऋण देते हैं। मार्च, 1979 तक राज्य वित्त निगमों द्वारा कुल 701.87 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की जा चुकी थी। रिजर्व बैंक आफ इंडिया की ऋण गारंटी योजना जुलाई, 1960 से ही चल रही है। मार्च, 1980 तक गारंटी शुदा अग्रिम-ऋण की राशि 3289 करोड़ रुपये थी जबकि मार्च, 1978 में यह केवल 2,440 करोड़ रुपये थी। यह वृद्धि ऋण-सुविधाओं के विस्तार के साथ ही ऋण देने वाली संस्थाओं की संख्या में वृद्धि का भी परिचायक है।

अविकसित पिछड़े क्षेत्रों में निवेश को बढ़ावा देने के लिए केन्द्र सरकार ने सहायता और राजस्व संबंधी प्रोत्साहनों का एक विशेष कार्यक्रम शुरू किया है। इस उद्देश्य से, औद्योगिक दृष्टि से, 246 जिले पिछड़े क्षेत्र घोषित किए गए हैं। इन जिलों में रियायती वित्त, आयकर में छूट आदि के रूप में भी कुछ विशेष सुविधाएं दी जा रही हैं। सरकार ने पहली जुलाई, 1981 से आरंभ होने वाली तिमाही से राज्य सरकारों को आबंटित किए जाने वाले सीमेंट का दस प्रतिशत भाग लघु क्षेत्र के उद्योगों के लिए आरक्षित कर दिया है ताकि लघु इकाइयों की वृद्धि और उनके सुचारु कार्य-संचालन के लिए पर्याप्त सीमेंट उपलब्ध हो सके।

कहने का तात्पर्य यह है कि जब सरकार लघु उद्योगों को इतना प्रोत्साहन दे रही है और पिछले लगभग तीन दशक में लघु उद्योगों ने इतनी जबर्दस्त प्रगति की है तो आपको भी अपनी पसंद का लघु उद्योग शुरू कर खुशहाली की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। □

"समुदाय मूलक शिक्षा तथा युवकों का दायित्व

महेश चन्द्र शर्मा,

किसी भी देश की सफलता का आधार उस देश के युवकों का ज्ञान व आत्म-बल हुआ करता है। अतः युवक के जीवन की सार्थकता और राष्ट्र के विकास और उन्नयन दोनों के लिए प्रत्येक युवक को साक्षर एवं शिक्षित होना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसके लिए प्रौढ़ शिक्षा योजना को पूर्णरूपेण क्रियान्वित करने के संकल्प को मान्यता देने के लिए भारतीय संसद ने शिक्षा संबंधी नीति की घोषणा करते हुए प्रौढ़ शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की। प्रौढ़ शिक्षा को लोक-तांत्रिक प्रणाली के लिए आवश्यक मानते हुए गांधी जयन्ती के अवसर पर 2 अक्तूबर, 1978 को भारत सरकार ने एक विशाल राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के रूप में एक मशाल प्रज्वलित की जिससे युवकों के अन्याय, भेद-भाव असमानता व छुआ-छूत जैसी घिनौनी और समाज को कमजोर करने वाले रोग जलकर भस्म हो जाएं और समाज में साक्षरता, कार्यक्षमता और चेतनास्वरूप नए रक्त का संचार हो सके।

प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम एक बहुद्देशीय बृहत कार्यक्रम है जिसमें 15 से 45 वर्ष की आयु के 10 करोड़ निरक्षर युवकों को पांच वर्ष में साक्षर बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। निरक्षरता के पाश में जकड़ी हुई निरक्षर युवकों की भीड़ को साक्षर बनाने और उन्हें विकासोन्मुख दिशा प्रदान करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम जिन अवधारणाओं पर आधारित है, वे हैं : साक्षरता, कार्यक्षमता और चेतना। साक्षरता एक ऐसा सशक्त माध्यम है, जो युवकों को अपने जीवन के अनेक क्षेत्रों में आत्मविश्वास जगाते हुए जीना सिखाती है। कार्यक्षमता का विकास कर उत्पादक कार्यों में कुशलता को बढ़ाते हुये युवकों को जीवन-यापन के भरपूर अवसर प्राप्त होते हैं। चेतना जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है तथा जीवन में चेतना के बिना व्यक्ति मूर्छित के समान ही है। निर्धन, निरक्षर नागरिकों को महत्वपूर्ण नियमों, कानूनों के प्रति जागरूक करना तथा उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करना व उनके कर्तव्यों से अवगत कराना आदि सभी चेतना के प्रमुख अंग हैं। प्रौढ़ शिक्षा युवकों के समुचित विकास का एक माध्यम है।

अनजान रकम पर अंगूठा लगाकर ऋण लेने वाला खेतिहर मजदूर चार लाइन की अर्जी लिखाने के लिए मास्टर से पटवारी तक के धक्के खाने वाला कारीगर, पति की चिट्ठी पढ़वाने के लिए अनुकूल और विश्वसनीय व्यक्ति की तलाश में ग्रामीण महिला और आधे-पौने पैसे लेकर जानवर के चमड़े को बेचकर ठगे जाने वाला चर्मकार युवक आदि ऐसे अंगूठा छाप लोगों की 65 करोड़ की जनसंख्या वाले इस देश में लगभग 40 करोड़ 50 लाख हैं जबकि तीस साल वर्ष पूर्व यह संख्या कुल 28 करोड़ थी।

शिक्षा परिवर्तन एवं विकास का एक अत्यंत महत्वपूर्ण संसाधन है। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही प्रौढ़ शिक्षा की गति-विधियों का संचालन किया जाता रहा है किन्तु गत दशकों के परिणामस्वरूप देश में प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में कोई क्रांतिकारी प्रगति नहीं हो सकी। क्योंकि योजनाएं तो बहुत सी बनाई गई किन्तु सुदूर ग्रामों में कोई धनात्मक योगदान नहीं प्राप्त हो सका। प्रौढ़ शिक्षा इस प्रकार केवल साक्षरता अभियान का नाम ही नहीं है, अपितु यह एक संपूर्ण एवं सांगोपांग शिक्षा है, जो व्यक्ति के विकास का आवश्यक अवयव है। इस प्रकार समाज में यह चेतना आनी चाहिए कि ग्रामीण क्षेत्र के युवक अज्ञान के अंधकार में डूबे हुए हैं, उन्हें प्रौढ़ शिक्षा का दीप जलाकर ज्ञान के प्रकाश में लाया जाए तथा ग्राम-ग्राम में निम्न पंक्तियों को साकार किया जाए :—

अंधकार को क्यों धिक्कारें,
अच्छा है एक दीप जलाएं।

समाजमूलक शिक्षा की समस्याएं

भारत में समाज शिक्षा की बहुत सी समस्याएं हैं जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं :—

1. ग्रामवासियों में समाज शिक्षा के प्रति उत्साह की भावना है तथा प्रौढ़ों को पढ़ने में रुचि नहीं है।
2. ग्रामीण प्रौढ़ साक्षरता को नौकरी प्राप्त करने का साधन मानते तथा इसके आर्थिक महत्व पर ही बल देते हैं।
3. कृषि के कामकाज के दिनों में रात्रि पाठशालाएं प्रायः बंद हो जाती हैं क्योंकि प्रौढ़ दिन भर खेती के कामों और दिन भर रोजी-रोटी कमाने में भागदौड़ के कारण रात को थका मांदा घर लौटता है। इस प्रकार उसे पढ़ने की फुरसत नहीं है।
4. समाज शिक्षा के लिए प्रौढ़ साक्षरों को अनवरत उपयोगी साहित्य नहीं मिल पाता है।
5. अधिकांश कार्यकर्ता शहरी वातावरण में पले होने के कारण समाज शिक्षा में भली प्रकार रुचि नहीं ले पाते हैं।
6. समाज शिक्षा में साक्षरता के अलावा स्वास्थ्य, मनोरंजन, घरेलू तथा आर्थिक शिक्षा आदि अन्य कार्यक्रमों पर समुचित बल नहीं दिया जाता है।
7. समाज शिक्षा के लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं।

आज 34 प्रतिशत आबादी साक्षर है। गत 30 वर्षों में साक्षरता केवल 15.6 प्रतिशत बढ़ी है। यदि जनसंख्या की यही प्रगति रही तो सन् 2001 में 100 करोड़

की जनसंख्या में 55 करोड़ अंगूठा छाप होंगे जो अपने अधिकार न जान सकेंगे और न उन्हें कर्तव्यों का ही ज्ञान होगा। ऐसे में सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन और असमानता में समाज का सपना साकार होने की कल्पना मात्र ही रह जाएगी।

प्रौढ़ साक्षरता के सम्बंध में विकास अन्वेषणालय, उत्तर प्रदेश, लखनऊ ने वर्ष 1964-65 में इटावा जनपद के विकास खण्ड भाग्यनगर के 32 गांवों में युवक नेताओं के योगदान से एक निरक्षरता उन्मूलन कार्यक्रम संचालित किया था। इससे पूर्व कनिष्ठ सहकारी (प्रसार) द्वारा 12 वर्ष में 50 वर्ष की आयु वर्ग की साक्षरता स्थिति के सम्बन्ध में एक प्रारंभिक सर्वेक्षण किया गया था। योजना के प्रथम वर्ष 1963-64 में 10 ग्रामों में यह कार्यक्रम आरंभ किया गया तथा साक्षरता निकेतन, लखनऊ के सहयोग से युवक मंगल दलों के सभापति एवं मंत्रियों में से चुने गए 10 प्रौढ़ शिक्षकों को 20 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर में प्रशिक्षित किया गया। दसरे वर्ष 1964-65 में 6 गांव और लिए गए तथा इस कार्यक्रम को 32 गांवों में चलाकर लगभग 500 निरक्षरों को साक्षर बनाया गया। इसी प्रकार का कार्यक्रम फूलपुर (इलाहाबाद) में भी चलाया गया। विकास अन्वेषण एवं प्रयोग-प्रभाग में अपनाई गई कार्य प्रणाली के सम्बंध में निम्न विशेष उल्लेखनीय हैं :--

1. कोई एक ही शिक्षण पद्धति नहीं अपनाई गई तथा जो पद्धति सफल रही, उसी को अपनाया गया।

2. अवैतनिक प्रौढ़ शिक्षकों के रूप में शिक्षित युवकों एवं महिलाओं को युवक मंगल दल और युवती महिला मंडल के युवक/महिला को यह दायित्व दिया गया कि वे अपने परिवार अथवा पड़ोसी के निरक्षर प्रौढ़ों को साक्षर बनाएं।

3. उनके लिए 8 दिन का शिविर आयोजित किया गया तथा उन्हें 50 सेट (स्लेट और पुस्तक) प्रत्येक गांव के लिए दी गई तथा यह लक्ष्य निर्धारित किया गया कि पढ़े लिखे परिवार में कोई व्यक्ति निरक्षर नहीं रहना चाहिए। "एक पढ़ाए दूसरे को" (इच वन, टीच वन) का कार्यक्रम चलाया जाए।

4. प्रत्येक युवक दल का शिक्षित सदस्य अपने परिवार के सदस्यों को शिक्षित करेगा। दो पड़ोसियों को साक्षर बनाएगा तथा ऐसे दो हरिजन परिवारों के दो सदस्यों को साक्षर बनाएगा जिस परिवार में कोई पढ़ा लिखा नहीं है।

5. ग्राम सेवक, सहायक विकास अधिकारी (समाज शिक्षा), सहायक विकास अधिकारी (महिला), प्रसार शिक्षक, खंड विकास अधिकारी के द्वारा गांव में जाकर इन प्रौढ़ रात्रि कक्षाओं में जाकर मार्गदर्शन एवं अनुसरण का कार्य किया गया।

6. प्रत्येक वर्ष युवक मंगल दल के द्वारा प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम में विशेष प्रगति के लिए एक युवक मंगल दल और एक पंचायत को पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया।

7. प्रति वर्ष 2 अक्तूबर को 'दीप जलाओ, अंधकार भगाओ' दिवस प्रत्येक युवक मंगल दल के द्वारा मनाकर कार्यक्रम का व्यापक प्रचार और प्रसार किया गया।

8. व्यवस्थित मूल्यांकन के उपरान्त प्रौढ़ साक्षरता में विशेष रुचि रखने वाले तथा विशेष सफलता प्राप्त करने वाले प्रौढ़ शिक्षकों को भी उच्च अधिकारियों द्वारा प्रमाण-पत्र वितरित करके प्रोत्साहित किया गया।

9. सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं मनोरंजन के कार्यक्रमों का समावेश प्रतिदिन प्रौढ़ कक्षाओं में रखा गया जिससे अच्छी उपस्थिति सुनिश्चित की जा सके।

10. बिना किसी कक्षा के आयोजन के झंझट तथा मिट्टी के तेल आदि के व्यय के युवकों के योगदान से 500 प्रौढ़ों को साक्षर बनाया।

पीपुल्स कालेज, हल्द्वानी, (नैनीताल) की स्थापना विकास अन्वेषण एवं प्रयोग प्रभाग, उत्तर प्रदेश में 1961 में डेनमार्क के फोक स्कूलों के आधार पर की, जिससे थारु बुक्सा जनजाति के युवकों को कार्यात्मक, साक्षरता के माध्यम से मुर्गी-पालन, डेरी, मधुमक्खी पालन, टेलरिंग, राजगीरी, ड्राई क्लीनिंग, रेडियो मरम्मत, ट्रांजिस्टर मरम्मत, बिजली फिटिंग, नाई, धोबी, फोटो आदि में दक्ष किया जा सके, और वे रोजगार प्राप्त कर सकें ।

शिक्षा की जल उठी मशाल।
जन जीवन होगा खुशहाल।।

प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम को सुदृढ़ एवं प्रभावकारी बनाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए :--

1. एक स्थान पर एक निर्धारित समय प्रौढ़ शिक्षा कक्षा को आयोजित करना अधिक व्यावहारिक एवं संभव नहीं है। निरक्षर प्रौढ़ की सुविधा के अनुसार स्थान एवं समय का ध्यान रखना चाहिए।

2. मिट्टी का तेल या अन्य सामग्री के दुरुपयोग की संभावना के निराकरण के लिए यह उत्तम होगा कि जन सहयोग द्वारा ही इन साधनों को जुटाया जाए।

3. प्रचलित प्रौढ़ शिक्षा पद्धतियों में से कोई एक ही शिक्षक पद्धति को अपनाया जाना उचित नहीं है तथा आवश्यकतानुसार पद्धतियों को उदारता से अपनाया जा सकता है क्योंकि प्रत्येक प्रौढ़ के मानसिक स्तर में विभिन्नता पाई जाती है।

4. प्रौढ़ साक्षरता के समय स्थानीय धर्म, रीति-रिवाज, बोली जाने वाली भाषा को विशेष रूप से ध्यान में रखना चाहिए, जिससे समाज शिक्षा कार्यक्रम स्थानीय आवश्यकता के अनुकूल बनाया जा सके।

5. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम में कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी, प्रौढ़ शिक्षक अपने आपको जन सेवक समझे। मनसा वाचा, कर्मणा सेवा व्रत लेकर कार्य करें। उनके प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था की जाए।

मंजिले मकसूद तक गर पहुंचना है आपको
घूंट कड़वा ही सही, दवा के बतौर पी लीजिए ।

6. समाज शिक्षा कार्य में लगे प्रौढ़ शिक्षकों एवं साक्षरों को अनवरत

[illegible] पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र [illegible] वितरित किए जाएं।

7. प्रौढ़ साक्षरता के लिए प्रौढ़ों को ऐसे साहित्य का वितरण होना चाहिए जिससे वे उपयोगी आधुनिक महत्वपूर्ण कार्यक्रमों, देश-विदेश, विज्ञान-कृषि तथा अन्य व्यवसायों के संबंध में आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर सकें।

8. प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम के अन्तर्गत मनोरंजन को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए। इसके लिए चल-चित्र, गोष्ठी, चर्चा, प्रदर्शन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, कठपुतली, टेलीविजन, प्रदर्शनी, अध्ययन-यात्रा आदि विशेष उपयोगी सिद्ध होंगे।

9. कार्यक्रम के अनुसरण एवं नियंत्रण कार्य के लिए विशेष व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके लिए प्रौढ़ कक्षाएं, पर्यवेक्षकों की भूमिका विशेष उपयोगी हो सकती है।

10. निर्धन युवकों को यदि किसी सीमा तक समाज शिक्षक, प्रौढ़ शिक्षक के कार्य में लगाया जाना अधिक लाभ-दायी सिद्ध होगा।

11. महिला प्रौढ़ शिक्षक व पर्यवेक्षक अवश्य हों परन्तु उनके कार्य क्षेत्र में एकांकी एवं निर्जन स्थानों पर आयोजित होने वाली रात्रि प्रौढ़ कक्षाएं न हों।

12. प्रौढ़ शिक्षा के द्वारा ग्रामीण समुदायों में युगान्तकारी परिवर्तन किया जा सकता है। ग्राम की सफाई, ग्रामीणों का स्वास्थ्य, बचत के समय का आर्थिक दृष्टि से सदुपयोग, सामाजिक कुरीतियों का निवारण, नागरिक शिक्षा, देश प्रेम, राष्ट्रीय एकता तथा स्वावलम्बन का ज्ञान प्रदान कर उनके दृष्टिकोण को व्यापक व्यावहारिक बनाया जा सकता है।

13. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का पत्र-पत्रिकाओं, चल चित्र प्रदर्शनों, गोष्ठी, वाद-विवाद, परिसंवाद आदि सभी संभव माध्यमों से अधिकाधिक प्रचार किया जाना चाहिए जिससे सही लोग जानकारी प्राप्त होने पर कार्य-क्षेत्र में आ सकें।

14. समुदायमूलक शिक्षा में साक्षरता के साथ-साथ स्वास्थ्य, मनोरंजन, घरेलू तथा आर्थिक शिक्षा आदि का भी समुचित ध्यान रखना चाहिए।

15. साक्षर बनाने के उपायों के संबंधों में शिक्षकों के प्रशिक्षण संस्थाओं, विश्वविद्यालयों को अनुसंधान कार्य किया जाना चाहिए।

16. समाज शिक्षा का कार्य व्यवस्थित एवं सुचारु रूप से चलाने के लिए एक उपयुक्त संरचना आधार (इन्फ्रास्ट्रक्चर) होना चाहिए जिससे उचित मार्गदर्शन पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण किया जा सके।

17. अवसर ज्ञान कराने के बाद फिल्म, रेडियो, पुस्तकालयों, वाचनालयों की सहायता से साक्षरता बनाये रखने एवं उपयोगी ज्ञान प्राप्त कराने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

18. कार्यात्मक साक्षरता का आयोजन कृषक प्रशिक्षण एवं शिक्षा को एक एवं उपयोगी जो अंग के रूप में स्वीकार किया गया है, जिसका आयोजन समाज के 73 प्रतिशत कृषि में लगे कृषकों को साक्षर बनाना तो है ही, साथ ही उन्हें सरल, सुबोध, प्रादेशिक भाषाओं में तैयार की गई प्रवेशिकाओं के माध्यम से अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्मों की जानकारी, कार्ययोजना तैयार करने, फार्म लेखा जोखा रखने, उर्वरक एवं खाद के प्रयोग, ऋण के लिए आवेदन पत्र तैयार करने आदि दैनिक आवश्यकताओं के सम्बन्ध में शिक्षित किया जाए।

19. कार्यात्मक साक्षरता के माध्यम से निरक्षर युवकों को भारत सरकार द्वारा स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण योजना (ट्राइसेम) राष्ट्रीय योजना चलाई है जिसका मुख्य उद्देश्य प्रत्येक वर्ष दो लाख ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार के लिए कृषि व इस पर आधारित तथा अन्य धंधों में प्रशिक्षित किया जाता है। इसके अनुसार प्रदेश के प्रत्येक विकास खण्ड से 40 व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे युवकों को अपने रोजगार से 10 से 20 रुपये प्रति दिन आय प्राप्त हो सके।

20. प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम में प्राइमरी स्कूल, जूनियर हाई स्कूल, सेकेन्डरी स्कूल, महाविद्यालय तथा अन्य शिक्षा संस्थाओं एवं जन सेवी संस्थाओं को प्रौढ़ शिक्षा का कार्य अपने साधनों से अवश्य करना चाहिए जैसा कि अमरीका में पब्लिक स्कूल, सामान्य स्कूली शिक्षा के साथ-साथ प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम चलाते हैं। वर्ष 1958 से 1959 में पब्लिक स्कूलों में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम में भर्ती प्रौढ़ों की संख्या 34.28 लाख थी।

अनौपचारिक शिक्षा ग्रामीण एवं राष्ट्रीय विकास के बन्द दरवाजे में लटके बड़े ताले की कुंजी के समान है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में द्रुतगामी विकास के लिए जीवन्त ग्रामीण युवक ही मूल आधार हो सकते हैं परन्तु यह तभी सम्भव हो सकता है जब उन्हें प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम द्वारा कार्यात्मक साक्षरता के अन्तर्गत दक्ष बनाया जाए। इसके लिए उत्तर प्रदेश में साक्षरता निकेतन, लखनऊ द्वारा संचालित प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम तथा प्रसार प्रशिक्षण केन्द्रों के निकटवर्ती गांवों में चलाई गई रात्रि कक्षाएं तथा इस सम्बन्ध में किए गए अन्य प्रभावकारी एवं सफल प्रयासों का समावेश कार्यक्रम में किया जाए। युवक मंगल दलों के माध्यम से प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम को कार्यान्वित कराया जाना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा तथा युवकों के सक्रिय योगदान से इस विशाल कार्यक्रम के कार्यान्वयन से निरक्षरता रूपी दानव का अन्त होगा और चेतना रूपी सूर्योदय के प्रकाश से रूढ़िवादिता का अन्त होगा। □

अब ऊसर भूमि से भी फसल ली जा सकती है

*

—जगदीश प्रसाद रोहिल

आज हमारे देश में कृषि योग्य भूमि की कमी नहीं है, जो है उससे हमें विपुल मात्रा में खाद्यान्नों की उपज मिल रही है। हम कृषि उत्पादन में केवल आत्मनिर्भर ही नहीं हो गए हैं बल्कि आज हम दूसरे विकासशील देशों की कृषि प्रौद्योगिकी में सहायता करने के साथ ही अपने खाद्यान्नों का निर्यात भी कर रहे हैं। इसके बावजूद कृषि उत्पादन को और अधिक बढ़ाने की काफी गुंजाइश है। इसके लिए हमें अपनी समस्त 'ऊसर' यानी 'कल्लर' या 'रेह' वाली भूमि को उपजाऊ बनाना होगा। यह कार्य लगन, मेहनत, अनुसंधान के जरिए और किसानों को समुचित मार्गनिर्देशन के माध्यम से ही संभव हो पाएगा। इससे हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था और अधिक सुदृढ़ होगी।

भारत में लगभग 70 लाख हेक्टेयर भूमि क्षारीय या ऊसर या कल्लर है जिसमें किसी प्रकार की पैदावार नहीं होती है। इसमें 25 लाख हेक्टेयर भूमि पंजाब, हरियाणा, और उत्तर प्रदेश में है। ऐसी भूमि में वर्षा के बाद पानी गंदला एवं काफी देर तक भरा रहता है क्योंकि इसमें पानी को सोखने की शक्ति कम होती है। इस तरह भूमि में सोडे और कार्बोनेट वाले लवणों की अधिकता के कारण भूमि बिल्कुल खराब हो जाती है। गर्मी के मौसम में पानी सूख जाने के बाद इसमें दरारें पड़ जाती हैं और कई बार सफेद एवं काले लवण भूमि की ऊपरी सतह पर आ जाते हैं। ऐसी भूमि को 'कल्लर', 'ऊसर' या 'रेही' के नाम से पुकारा जाता है। इस प्रकार की जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए हरियाणा राज्य में करनाल स्थित केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान ने एक अनूठा महत्वपूर्ण प्रयास किया है।

ऊसर जमीन की समस्या के समाधान के लिए लगभग 11-12 वर्षों से इस अनुसंधान संस्थान में प्रयास किया जा रहा था। संस्थान के वैज्ञानिकों ने अनेक शोध कार्यों के आधार पर एक ऐसी समुचित विधि या तरीका खोज निकाला है जिससे 'कल्लर' यानी 'ऊसर' भूमि को आसानी से खेती-योग्य बनाया जा सकता है। इस तरीके को अपनाकर किसान पहले वर्ष में ही खरीफ में धान और रबी में गेहूं, बरसीम/शफतल तथा जौ की अच्छी फसल उगा सकते हैं। यदि वे सही तरीका अपनाएं तो तीन वर्षों के भीतर फसल की अच्छी पैदावार ले सकते हैं। संस्थान ने ऊसर भूमि का सुधार और उसमें फसल उगाने के लिए 12 महीनों के लिए अलग-अलग कार्यक्रम तैयार किया है। प्रति माह किए जाने वाले कार्यों का संक्षिप्त ब्यौरा इस प्रकार है :—

मार्च-अप्रैल

भूमि को समतल कर और चारों ओर लगभग डेढ़ फुट ऊंची मजबूत मेंड़ बनाएं ताकि वर्षा का पानी बाहर से खेत के अंदर न आए और खेत का पानी बाहर न जाने पाए। इसके बाद एक हेक्टेयर खेत को 16 या 20 हिस्सों में बांट कर काफी पानी से सिंचाई करें।

मई

ऊसर भूमि की मिट्टी की निकटतम परीक्षण प्रयोगशाला में जांच करवाएं। आम-तौर पर एक हेक्टेयर भूमि में 10-15 टन जिप्सम को 10 सेंटीमीटर ऊपरी सतह में हल्की जुताई से खेत में मिलाएं। इसका प्रयोग केवल एक बार ही करें। इसके बाद 7 से 15 दिन तक खेत में पानी खड़ा रखें।

जून

इस माह के तीसरे सप्ताह तक खेत भली प्रकार तैयार कर लें। इसमें 25 से 40 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर खेत में डालें। इसके साथ ही 75 किलोग्राम नत्रजन तत्व (375 किलोग्राम अमोनियम सल्फेट, अगर यह खाद न मिले तो लगभग 180 किलोग्राम यूरिया) को प्रति हेक्टेयर खेत में जुताई करके मिला दें। सुपरफास्फेट और म्यूरेट आफ पोटाश खादों को मिट्टी की जांच करवाने के आधार पर ही मिलाएं।

धान की पौध उगाने की तैयारी

पौध उगाने के लिए अच्छे किस्म के बीजों का चुनाव करें। एक किलोग्राम नमक का 10 लीटर पानी में घोल बनाकर 2-3 किलो-ग्राम बीज एक बार डालें और जो बीज हल्का होकर पानी में तैरने लगे उसका प्रयोग न करें। इस प्रकार एक हेक्टेयर खेत में रोपाई के लिए 60 किलोग्राम बीज की जरूरत होती है और इसकी धुलाई के लिए 5-6 किलोग्राम नमक की। इसके बाद बीजों को साफ पानी में धो लें। इसके बाद 50 ग्राम सेरसेन

[illegible] 50 लीटर पानी में घोल कर धोए हुए बीजों को इसमें 8 से 10 घंटे तक डाले रखें। इसके बाद ही इनकी पौध उगाएं। इन बीजों को 20 मई से जून के प्रथम सप्ताह तक पौध के लिए तैयार कर लें।

इनकी रोपाई के 10 दिन बाद खेत से पानी निकाल दें और 2-3 दिन बाद फिर सिंचाई करें। यदि पौध में पत्ती के किनारे पीले पड़ने लगें तो 0.5 से 1.0 प्रतिशत न्यूट्रल फैरस सल्फेट के घोल का छिड़काव करें।

कल्लर भूमि के सुधार के आरम्भ के तीन-चार वर्ष रोपाई से पहले भूमि की गीली जुताई न करें। 30-45 दिन की पौध ऐसी भूमि के लिए उपयुक्त होती है। अगर खेत में कहीं-कहीं पौधों के मर जाने के बाद खाली जगह हो जाए तो वहां एक किलोग्राम जिप्सम प्रति वर्ग मीटर की दर से डाल कर दुबारा पौध अवश्य लगानी चाहिए, चाहे वह कुछ दिन पछेती क्यों न हो। कई बार जिंक सल्फेट डालने के बाद भी खेत में कहीं-कहीं जिंक की कमी आ जाती है, ऐसे स्थानों पर 5 किलोग्राम जिंक सल्फेट और ढाई किलोग्राम बुझे चूने को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर एक हेक्टेयर खेत में डालना चाहिए।

जुलाई

कम समय में पकने वाली धान की किस्मों की रोपाई से पहले खेत को आखरी बार तैयार करने के बाद उसमें 60 किलोग्राम नवजन तत्व यानी 300 किलोग्राम अमोनिया सल्फेट या 150 किलोग्राम यूरिया वाले उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए। रोपाई के 10 दिन बाद पहला पानी निकाल दें और 2-3 दिन बाद फिर सिंचाई करें।

खरपतवार की रोकथाम के लिए पैडी-वीयर से खेत की गुड़ाई करें। पनपी हुई पौधों पर गन्धी बग, धान का टिड्डा इत्यादि की रोकथाम के लिए बी.एच.सी. (10 प्रतिशत) का 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से गुड़ाई करें। **तना बेधक** के निवास के लिए जुलाई के अन्त में अथवा अगस्त के शुरू में 300 मिलीलीटर पैराथियोन मैटासिड (300 ई.सी.) का 750 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर जमीन पर छिड़काव करें।

अगस्त

जब रोपाई किए 45-50 दिन हो जाएं तो 185 किलोग्राम अमोनिया सल्फेट या 80 किलोग्राम यूरिया का उपयोग करें और कीड़ों की रोकथाम के लिए मैथाइल पैराथियोन 875 मिलीलीटर तथा 800 ग्राम ब्लाइटैक्स का 400 लीटर पानी में घोल बनाकर हाथ से चलने वाले पम्प से प्रति हेक्टेयर खेत पर छिड़काव करें। यह ध्यान रहे कि फसल में 5 सैं.मी. तक पानी अवश्य खड़ा रखें।

सितम्बर

रोपाई के लगभग 80 दिन बाद अधिक समय में पकने वाली किस्मों को कीटनाशक दवाइयों का तीसरा छिड़काव करना चाहिए। उपरोक्त दवाई की मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर एक हेक्टेयर भूमि पर छिड़काव करें। कटाई से 8-10 दिन पहले खेत से पानी निकाल दें। कई बार भूरे रंग के हापर कीड़े फसल को नुकसान पहुंचाते हैं और खेत में कहीं-कहीं फसल बिल्कुल मर जाती है उसके लिए 10 किलोग्राम फ्यूराडान ग्रेन्यूल्स को प्रति हेक्टेयर भूमि पर डालें।

अक्तूबर

15 अक्तूबर तक कटाई के बाद भूमि सुधार के प्रथम वर्ष में बरसीम की अपेक्षा **शफतल** की खेती हरे चारे के लिए अधिक अच्छी रहती है। इसके उगाने के लिए खेत से खरपतवार निकाल कर 3-4 बार जुताई करके खेत तैयार करें। खेत को आखिरी बार तैयार करते समय 125 किलोग्राम अमोनिया सल्फेट या 55 किलोग्राम यूरिया, 80 किलोग्राम फासफोरस, 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट के मिश्रण को प्रति हेक्टेयर भूमि में डाल दें। 10 प्रतिशत गुड़ का आधा लीटर घोल बनाएं और उसमें एक पैकेट जीवाणु संवर्धन मिला दें। इसमें लगभग 10 किलोग्राम बीज डालकर मिलाएं ताकि वह घोल सब बीजों को लग जाए। बाद में बीजों को छाया में सुखा लें। जब खेत में पानी खड़ा हो तो शाम को बीजों को उसमें बिखेर दें। बुआई के बाद आवश्यकतानुसार हल्की-हल्की सिंचाई करते रहें। साथ ही गेहूं की बुआई के लिए खेत तैयार करना शुरू कर दें।

नवम्बर

गेहूं की बुआई से पहले 2 ग्राम विटावैक्स अथवा ढाई ग्राम सेरसेन बेट या ढाई ग्राम अमरासेन जी.एन. या 3 ग्राम कप्तान या 5 ग्राम थीरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से लगाएं। बुआई के समय ऊसर भूमि में 375 किलोग्राम अमोनियम सल्फेट अगर यह न मिले तो तीन क्विंटल किसानखाद और 25-30 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर में डालें। अगर मिट्टी की जांच किसी कारणवश न हो सके तो 40 किलोग्राम फासफोरस भी डाल लें।

दिसम्बर

गेहूं की बुआई के 18–20 दिन बाद **पहला पानी दें। उसके बाद 180 किलोग्राम अमोनिया सल्फेट या 150 किलोग्राम किसान** खाद या 80 किलोग्राम यूरिया को प्रति हेक्टेयर भूमि में डालें। बाद में 30–35 दिन के बाद 2 किलोग्राम ट्रिब्यूनल का **700 लीटर पानी में घोल बनाकर** प्रति हेक्टेयर खेत की लाइनों के बीच छिड़काव करें। 40–42 दिन बाद दूसरी सिंचाई के साथ उपरोक्त मात्रा में ही उर्वरकों का उपयोग करें। **ऊसर भूमि में गेहूं की फसल की सिंचाई अधिक बार लेकिन** थोड़ी-थोड़ी करें। अगर किसी कारणवश अधिक पानी लग गया हो तो उसे बाहर निकाल दें। ध्यान रहे कि वर्षा तथा तापमान इत्यादि के अनुसार सिंचाई के समय में तबदीली कर लें।

जनवरी

नराई और गुड़ाई करना अत्यावश्यक है ताकि घास-फूस की रोकथाम हो सके। खाद **की कमी हो तो 3 किलोग्राम यूरिया खाद** को 100 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। एक हेक्टेयर के लिए 600 लीटर पानी का घोल बनाएं।

फरवरी

हर दो सप्ताह बाद हल्की-हल्की सिंचाई करें। **अगर तेला और जौसिड फसल को** नुकसान पहुंचा रहा हो तो रोकथाम के लिए 300 मिलीलीटर रोगोर या मैटासिस्टोक्स (कीटनाशक दवाई) का 370 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

मार्च

इसी समय फसल दूधिया हो जाती है इसलिए हर 10–12 दिन बाद हल्की सिंचाई करें। कीड़े लगे पौधों को बाहर निकाल कर जला दें।

अप्रैल में कटाई ठीक समय पर और कटाई करने से पूर्व 8–10 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें।

यदि आपके पास सिंचाई के पर्याप्त साधन हों तो गर्मियों में ढंचा को हरी खाद के लिए उगाएं। संस्थान में किए गए [illegible] के आधार पर यह पता चला है कि ढंचा की हरी खाद से धान की अगली फसल में नत्रजन तत्वों वाली खाद डालने की जरूरत नहीं पड़ेगी। इसकी बुआई से पहले बीज को एक रात के लिए भिगो दें और दूसरे दिन [illegible] काल जब खेत में पानी हो तो बीज [illegible] कर बो दें।

मई माह में हर 5-6 दिन बाद हल्की सिंचाई करें। इसी प्रकार जून में 9-10 दिन बाद सिंचाई करते रहें। जब यह 8 [illegible] हरी खाद के लिए [illegible] परीक्षणों से यह भी मालूम [illegible] को हरी खाद के लिए [illegible] के बाद भारी सिंचाई करनी [illegible] कुछ ही दिन बाद [illegible] रोपाई की जा सकती है [illegible] पानी होने के कारण [illegible]।

[illegible] एक हेक्टेयर [illegible] क्विंटल धान और 15–2[illegible] सकता है। अगले वर्षों में पैदावार और भी बढ़ जाती है। इस लगातार तीन वर्ष तक अवश्य करना चाहिए।

इस विधि के द्वारा पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में लगभग 60 हजार हेक्टेयर ऊसर या कल्लर भूमि को खेती योग्य बनाया जा चुका है।

[illegible] जिनके पास केवल ऊसर भूमि ही है और उनके पास आजीविका का कोई और साधन नहीं है, अस[illegible] धंधों में लग गए हैं, [illegible] दौड़ जाएगी। इस प्रकार उनके जीवन में एक नई आशा की किरण फूटेगी। अतः केन्द्रीय मृदा लवणता संस्थान ने "जहां चाह वहां राह" वाली [illegible] कर दिखाया है। □

मधुमक्खी पालन : एक लाभदायक सहायक धंधा

मधुमक्खी पालन किसानों और [illegible] मजदूरों के लिए एक आदर्श सहायक धंधा है। बुआई और फसल की कटाई के समय को छोड़कर वर्ष भर [illegible] मिलने वाले काफी समय में यह [illegible] आसानी से अतिरिक्त आय [illegible] सकती है। मधुमक्खियां पालने [illegible] बहुत अधिक जगह की आवश्यकता नहीं होती है और यह धंधा थोड़े [illegible] ही चलाया जा सकता है।

इस सहायक धंधे की [illegible] के कारण देहाती इलाकों में [illegible] से बड़े पैमाने पर अपनाया जा [illegible] समय देश में लगभग 331[illegible] मधुमक्खी पालने का काम किया [illegible] देहाती इलाकों के लगभग 1 [illegible] लोग इस धंधे में लगे हैं [illegible] औसत रूप से 500 रुपये [illegible] रुपये तक अतिरिक्त आमदनी हो [illegible] 1978-79 में मधुमक्खी [illegible] भग 3.66 करोड़ रुपये को [illegible]

अब देश में मधुमक्खी [illegible] गत तरीके के स्थान पर वैज्ञानिक [illegible] किया जाने लगा है। इसके [illegible] स्वरूप शहद और मोम दोनों के [illegible] लगातार वृद्धि हो रही है। [illegible] में मात्र 2000 रुपये मूल्य का शहद का उत्पादन किया जा सका था। मधुमक्खी [illegible]

[illegible] 1978-79 [illegible]

[illegible] 1978-79 [illegible]

[illegible] सभी मानकों से एक [illegible] सहायक ग्रामीण उद्योग का रूप [illegible] के लिए इसके सभी पहलुओं पर ध्यान दिया।

मधुमक्खी पालन को ठोस वैज्ञानिक [illegible] के उद्देश्य से आयोग ने [illegible] केन्द्रीय अनुसंधान और [illegible] तथा पांच क्षेत्रीय अनुसंधान [illegible] केन्द्रों की स्थापना की। इसके [illegible] हल्द्वानी, मुजफ्फर[illegible] में इसके [illegible] जहां मधुमक्खी पालन [illegible] प्रयोग किए जाते हैं। [illegible] अनुसंधान केन्द्र [illegible] के लिए प्रशिक्षण पाठ्य[illegible]

[illegible] आयोग एक प्रकार [illegible] के संरक्षक [illegible] रहा है। आयोग [illegible] के लिए [illegible] भी देता है। पिछले [illegible] उपकरणों और अन्य सामग्री [illegible] अनुदान/ [illegible] मधुमक्खी पालकों को [illegible] इसका [illegible] आवश्यक जानकारी [illegible] करने के लिए आवश्यक [illegible] उपकरण सुलभ कराने और उनके शहद और मोम की बिक्री की

[illegible] की अधिकांश समस्याएं दूर कर दी हैं।

आयोग अपने क्षेत्रीय केन्द्रों, राज्य मंडलों, पंजीकृत संस्थाओं और सहकारी समितियों के माध्यम से तकनीकी और आर्थिक सहायता उपलब्ध कराता है। 1977-78 में आयोग ने 4.45 लाख रुपये के ऋण और 14.89 लाख रुपये के अनुदान दिए। 1978-79 में 10.88 लाख रुपये के ऋण और 20.14 लाख रुपये के अनुदान दिए।

यह तो सभी जानते हैं कि मधुमक्खी से हमें शहद और मोम मिलता है। लेकिन यह जानकारी संभवतः अपेक्षाकृत बहुत कम

मधुमक्खी पालन से मधु भी और मनोरंजन भी

लोगों को है कि परागसेचन (पालीनेशन) के माध्यम से मधुमक्खियां विभिन्न फलों और सब्जियों की पैदावार को कई गुना बढ़ाने में सहायक होती हैं।

केन्द्रीय मधुमक्खी अनुसंधान संस्थान द्वारा किए गए परीक्षणों से फलों की उपज में परागसेचन से हुई वृद्धि का पता लगाया गया। प्राकृतिक रूप में होने वाले परागसेचन की तुलना में मधुमक्खियों के परागसेचन से सरसों की उपज में 131 प्रतिशत, कुसुम में 511 प्रतिशत, तिल्ली में 1121 प्रतिशत, सूरजमुखी में 675 से 3600 प्रतिशत, अलसी में 232 प्रतिशत, प्याज में 178 प्रतिशत, गाजर में 500 प्रतिशत, मूली में 700 प्रतिशत, बैंगन में 25 से 150 प्रतिशत मौसमी और संतरे जैसे फलों में 35 से 900 प्रतिशत, अमरूद में 200 प्रतिशत और काफी की उपज में 83 प्रतिशत वृद्धि पाई गई है। कपास, तम्बाकू, सरसों, मटर, टमाटर और फली तो फल और बीजों के उत्पादन के लिए पूरी तरह मधुमक्खियों द्वारा परागसेचन पर निर्भर करते हैं।

मधुमक्खी द्वारा परागसेचन से उपज में वृद्धि की जानकारी का प्रसार किया जा रहा है तथा शहद और मोम के अलावा इस उद्देश्य के लिए भी मधुमक्खी पालन का धंधा अपनाया जाने लगा है।

भारत में लगभग पांच करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में ऐसी फसलें उगाई जाती हैं जिनकी मधुमक्खी द्वारा परागसेचन के माध्यम से उपज बढ़ाई जा सकती है। इनमें से अनेक फसलों में पर्याप्त मात्रा में परागसेचन के लिए प्रति हेक्टेयर 3 से 9 मधुमक्खी परिवारों की आवश्यकता होगी। यदि प्रति हेक्टेयर 3 परिवार भी रखे जाएं तो लगभग 15 करोड़ मधुमक्खी परिवारों की आवश्यकता होगी। इस समय देश में 6.33 लाख मधुमक्खी परिवार हैं। यदि पर्याप्त संख्या में मधुमक्खी परिवार बनाए जाएं तो परागसेचन द्वारा कृषि उत्पादन से 45 करोड़ रुपये की वृद्धि आसानी से हो सकती है।

हमारे देश की जलवायु मधुमक्खी पालन के विकास के लिए बहुत ही अनुकूल है। यहां ऐसे पेड़-पौधे होते हैं जिनमें सारे वर्ष किसी न किसी समय फूल आते ही रहते हैं।

कृषि आयोग की सिफारिशें

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था, विशेषकर देहाती लोगों की आर्थिक दशा में सुधार लाने की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं। आयोग का यह सुझाव है कि वर्ष 2000 तक मधुमक्खी के एक परिवार से 10 किलोग्राम शहद प्राप्त करने का लक्ष्य रखा जाना चाहिए। इस समय यह उत्पादन 3 से 5 किलोग्राम है। यदि यह लक्ष्य प्राप्त कर लिया जाता है तो प्रतिवर्ष 60 हजार टन से अधिक शहद प्राप्त किया जा सकेगा।

लाखों लोगों को रोजगार

बीस वर्ष की अवधि में शहद के उत्पादन के इस बड़े लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बड़े पैमाने पर मधुमक्खी घर तैयार करने, मक्खियों की देखभाल करने, अतिरिक्त शहद, मोम और मक्खी के विष के रखरखाव और बिक्री के लिए बड़ी संख्या में दस्तकारों, मधुमक्खी पालकों और अन्य कर्मचारियों की जरुरत होगी। 60 लाख मक्खी परिवारों की देखभाल के लिए ही लगभग 20 लाख मधुमक्खी पालकों की आवश्यकता होगी।

इसके अलावा 60 हजार टन शहद के अनुमानित लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए तीन हजार मधुगृहों की स्थापना करनी होगी। इनके समुचित संचालन के लिए कम से कम और 15 हजार लोगों को नियमित रोजगार दिया जा सकेगा।

महात्मा गांधी के शब्दों में "मधुमक्खी पालन एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें विस्तार की अपार संभावना है।" शहद के गुणों, मोम की उपयोगिता और कृषि उपज में परागसेचन के महत्व को देखते हुए मधुमक्खी पालन को बढ़ावा दिया जाना वांछित है। यह उद्योग बहुत ही उपयोगी, कम खर्चीला और आसान होने के कारण ग्रामीण विकास का एक महत्वपूर्ण साधन बन गया है। □

भारत कब हिन्दी बोलेगा ?

✳ अभिमन्यु अनत, मारीशस ✳

छब्बीस अप्रैल : श्रीमती विद्या चौधरी का पत्र 'ये दिखावे का शहर और गांव की एक लड़की' पढ़ने को मिला। बिहार के गांव से आई हुई उस नवेली की व्यथा को मैं भी दिल्ली में कई बार झेल चुका हूं। उस पत्र को पढ़ कर उस दर्द को फिर से मानसिक स्तर पर भुगत रहा हूं। सच पूछा जाए तो यह दर्द सिर्फ दिल्ली ही नहीं देती बल्कि भारत के सभी शहरों से मैंने यह सौगात पाई है। भारत की नई संस्कृति की इस चुभन को वे सभी विदेशी भी झेलते रहे हैं, जो अपने देशों से हिन्दी में बात करने की चाह से भारत पहुंचते हैं।

श्रीमती विद्या चौधरी की तरह इस नर्क में भारत के बेशुमार लोग जी रहे हैं। लाखों लोगों को प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते। उनकी फरियाद, अधिकारों की मांग सभी कुछ अनसमझी चली जा रही है। बड़े लोग जो अधिकार बख्शते हैं, उन्हें अगर हिन्दी आने लग जाए तब तो इसका यह मतलब हो जाएगा कि सर्वहारा को हर मांग समझी जा रही है और उसके पूरे किए जाने की संभावना पैदा हो जाती है। हिन्दी को स्वाभाविक रूप से विकसित होने देने का अर्थ होगा आम आदमी की आवाज को बुलंदी देना। मौजूदा यंत्र को यह कैसे स्वीकार हो सकता है।

लगता है विद्या चौधरी के आजाद देश की आजादी को अभी आजाद होने में समय लगेगा। भारत की अपनी हाल की यात्रा के बाद मैं अपने देश को लौटा हूं। भारत के संदर्भ में एक नए प्रश्न के साथ--क्या भारत में हिन्दी बोलने वालों को अपने सुने, समझे जाने और बोलने का अधिकार है?

हम मारीशस वालों को भारत में हर ठौर पर यह दाद मिलती रही है कि वाह-वाह आप लोग मारीशस में हिन्दी की बहुत सेवा कर रहे हैं। यह शाबाशी बम्बई, दिल्ली, पटना, आगरा, बनारस, कलकत्ता, यहां तक कि मद्रास में भी मिलती रही है। अपनी हाल की यात्रा पर इस कपटी अभिनंदन से ऊब कर मैं हिन्दी के उस महारथी से पूछ ही बैठा कि ठीक है, हम तो वहां हिन्दी के लिए जी-मर रहे हैं पर आप लोग यहां क्या कर रहे हैं? यह प्रश्न मैं इसलिए कर बैठा था कि बनारसी अंदाज में पान चबाता हुआ वह आदमी मेरे हर हिन्दी वाक्य का उत्तर अंग्रेजी में दिए जा रहा था। बाद में पता चला कि हिन्दी की बदौलत वह व्यक्ति विधान सभा का सदस्य था।

'साहित्य अकादमी' की दावत पर मैं 'प्रेमचंद की भारतीयता' पर एक अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी में अपने विचार व्यक्त करने के लिए आमंत्रित था। प्रेमचंद की भारतीयता को मुझ से अंग्रेजी में कहलवाया गया। वह केवल राजेन्द्र यादव थे जो उसी भाषा में बोल गए जिसमें उनकी मर्जी रही। जीवन में पहली बार मुझे अतिथि होने का दुख हुआ। खैर, उस सम्मेलन में कोई दस देशों से हिन्दी विद्वान बुलाए गए थे--अंग्रेजी में बोलने के लिए। सभी विदेशी जब आपस में बोल रहे थे तो उनके लिए सम्पर्क और अभिव्यक्ति की भाषा हिन्दी थी पर जब उनको भारतीय प्रतिनिधियों से बोलना पड़ रहा था, उस वक्त अंग्रेजी का सहारा लेना उनके लिए अनिवार्य हो जाता था। इससे करारा व्यंग्य और हो ही क्या सकता है। इस मनोवृत्ति का एक दूसरा रूप और भी है--मारीशस में शायद ही दस आदमी मिलें जो रूसी, चीनी या अफ्रीकी भाषा समझ पाते होंगे। लेकिन जब भी इन देशों के कोई नेता या प्रतिनिधि अपने देश की आजादी या किसी ऐसे ही अवसर पर स्थानीय रेडियो, टेलीविजन पर बोलते हैं तो अपने देश की भाषाओं में। बस एक भारतीय प्रतिनिधि ही ऐसा होता है जिसे अपने देश की भाषा में बोलते हुए लघुता की भावना महसूस होती रही है। वे जब भी बोले हैं आत्म-गौरव अनुभव करने वाली बोली में बोले हैं। भला एयर इंडिया वाले हिन्दी क्यों बोलें? बस हाथ जोड़ कर व्यावसायिक नमस्कार और मुस्कराने ही में उनकी अपनी पहचान और पूरी भारतीयता निहित है। इससे यात्रियों का कल्याण ही होता है। पिछली बार 'थोड़ा सा पानी ला दीजिए' के अनुरोध पर मुझे तीन सवाल मिले थे--'बेग योर पार्डन, एक्सक्यूज मी, सारी।' मेरे अपने देश में मुट्ठी भर चीनी हैं। सभी की दुकान हैं पर एक भी ऐसी दुकान आपको नहीं मिलेगी जिस पर दुकान का नामपट्ट चीनी भाषा में न हो। सात समंदर पार भी गैरभाषियों के बीच अपनी ही पहचान को बनाए रखने का इससे बड़ा संकल्प और हो ही क्या सकता है?

हिन्दी से अपनी जीविका पाने वाले ये हिन्दी फिल्म वाले हिन्दी बोलते हैं क्या? इन्हें तो हिन्दी से उबकाई आती है। ये चाहे वेटे किसी महान हिन्दी रंगकर्मी के हों, चाहे महान हिन्दी कवि के, ये बोलते तो अंग्रेजी में हैं। हिन्दी तो बस 'डायलाग' बोलने के लिए है। एक बिहारी अभिनेता ने तो मुझसे यहां तक कहा कि हिन्दी बोलने से आउट डेटेड होने का खतरा होता है।

हिन्दी के नाम पर करोड़ों खर्च कर के विश्व परिक्रमा कर लेना आसान हो सकता है पर हिन्दी को अपना सही दर्जा दिला सकना शायद बड़ा कठिन है। तभी तो आज हिन्दी के वोट लेकर भी हिन्दी की दुहाई देने वाले हिन्दी को पत्नी, प्रेयसी और मां वाला प्यार न देकर उसे वेश्या का क्षणिक प्यार दिए जा रहे हैं।

मैंने भारत में हिन्दी को आज भी

[illegible] देशों- [illegible] में बैंक, दफ्तर, अंतर्राष्ट्रीय केन्द्रों में हर जगह अंग्रेजी ही अंग्रेजी बोली जाती है। अंग्रेजी शायद इसलिए भी बोल ली जाती होगी क्योंकि अपने से छोटों पर उन्हीं की भाषा बोल कर धाक जमाना शायद कठिन हो। और फिर अपने को थोड़ा सा अलग बताना भी तो जरूरी होता है।

भारत के हिन्दी परिवारों में भी मैंने किसी भी पति की पत्नी नहीं देखी, न किसी भाई की बहन, न चाचा न चाची। सभी पत्नियों की वाईफ होती हैं। भाइयों की सिस्टर और भतीजों के अंकल और [illegible] चाय में दूध और चीनी भी नहीं डाली जाती। मिल्क और शुगर से काम चला लिया जाता है और फिर क्यों नहीं? विदेशी माल का 'क्रेज' भारत की विशेषता भी तो है, अब तो हिन्दी बोल लेने वाले होटलों के बेयरे और चपरासी भी अंग्रेजी की रट लगाए रहते हैं—'साब गुड मार्निंग। साब ब्रेकफास्ट। साब लंच—साब रूम सर्विस। शू शायन साब।'

अंग्रेजी का यह मोह मात्र हिन्दी का बहिष्कार नहीं है। यह गांधी, नेहरू, ठाकुर तथा पूरी भारतीय मानसिकता की अवहेलना है। अपनी अस्मिता, अंदरूनी शक्ति और गरिमा की नीलामी है यह। हम विश्व के दस कोनों से भारत पहुंचे हुए विदेशियों ने एक दूसरे से विदाई ली यह कह कर। 'उम्मीदें रखें हमारी अगली भारत यात्रा पर भारत हिन्दी बोल पाएगा'

—'दिनमान' के 14-20 जून, 1981 के अंक से साभार।

—केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, एक्स-वाई 68, सरोजिनी नगर, नई दिल्ली-110023 द्वारा प्रचारित।

पर्यावरण प्रदूषण रोकने में वृक्षों की भूमिका

※ राजमणि पाण्डेय ※

आधुनिक जीवन स्तर में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य का विशेष महत्व है। इसलिए यदि कहा जाए कि सुदूर भविष्य में यह पृथ्वी ग्रह मनुष्य के रहने योग्य नहीं रह जाएगी तो कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी। यह सब पर्यावरण प्रदूषण के कारण होगा जोकि आधुनिक जीवन के परिणामस्वरूप पैदा हो रहा है। हमारी परिस्थितियां, विशेषकर अविकसित देशों में इतनी बुरी नहीं हो सकतीं जितना लोग विश्वास करते हैं। फिर भी यह एक वास्तविकता है कि प्रदूषण के बुरे प्रभाव मानव जीवन पर काफी तेजी से पड़ रहे हैं। इसलिए यह उचित समय है कि इस खतरे से सावधान रहने के लिए लोगों में सामाजिक जागरूकता पैदा की जाए एवं आधुनिक जीवन के हर पहलू पर सावधानी बरती जाए। हमें इस दिशा में प्रयत्नशील रहना चाहिए कि ये बुरे दिन कभी देखने को न मिलें।

बढ़ते हुए उद्योग-धंधे एवं यातायात के परिणामस्वरूप प्रत्येक बड़े शहर की वायु दिन प्रतिदिन दूषित होती जा रही है। यद्यपि तेरहवीं शताब्दी से ही लोगों का ध्यान इस समस्या की तरफ आकर्षित है फिर भी यह दुर्भाग्य की बात है कि अभी तक यह अच्छी तरह से ज्ञात नहीं हो पाया कि इस दूषित वायु का जैविक प्रभाव क्या है?

विषैले पदार्थों का जीवाधारियों के ऊपर प्रभाव के बारे में जब हम सोचते हैं तो प्रदूषण समस्या की गंभीरता स्पष्ट रूप से नजर आती है। पौधों के ऊपर विषैले पदार्थों के प्रभाव की वास्तविकता इस बात से सिद्ध हो जाती है कि इन पदार्थों की उपस्थिति में पौधों की वृद्धि में करीब 50 प्रतिशत की कमी आ सकती है। इसके अतिरिक्त, इन प्रदूषणों की उपस्थिति में पौधों के उत्पादन में भी काफी कमी आ जाती है। संयुक्त राज्य अमरीका में वायु प्रदूषण की वजह से 500 मिलियन (5 अरब डालर) डालर की कीमत के अन्न के उत्पादन में कमी होती पाई गई है।

वर्तमान समय में कीट नाशकों के ऊपर जो भूमि, पानी एवं खाद्य में प्रदूषण के स्रोत हैं, काफी ध्यान दिया जा रहा है। यद्यपि ऐसे देशों में जहां सरकारी नियंत्रण एवं लोक सेवा विश्लेषण सेवाएं उपलब्ध हैं, इन कीट नाशकों की सूक्ष्म मात्रा ही इन्सान तक पहुंच जाती है। अविकसित देशों में यह स्थिति असंतोषजनक है। प्रमुख समस्या उन रसायनों के प्रयोग से होती है जिनका परिवर्तन हानि रहित या कम हानिकारक पदार्थों में धीरे-धीरे होता है। डी.डी.टी. कीटनाशक दवा इसका ज्वलंत उदाहरण है।

इंग्लैंड में डी.डी.टी. एवं डाई-एल्ड्रिन दवाइयों के निर्माताओं ने इन कीटनाशी दवाइयों का उत्पादन स्वयं बन्द कर दिया है क्योंकि इनका बुरा प्रभाव क्रमशः परभक्षी चिड़ियों के प्रजनन अंगों तथा नदी नाले के पानी के ऊपर पड़ता है। विकासशील देशों में ऐसी दवाओं के सस्ते होने की वजह से उनका प्रयोग अब भी चल रहा है। लेकिन अब समय ऐसा आ गया है कि इन दवाओं के बदले, अनु-

संधानकर्त्ता सलाहकार एवं पादप उत्पादकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाए कि वे इस दिशा में प्रयास करें कि इन दवाओं का प्रयोग कम किया जाए क्योंकि ये दवाएं महंगी भी हो सकती हैं।

वाहितमल एवं जल के निकास का समुचित प्रबन्ध न होना शहर में प्रदूषण का दूसरा स्रोत है। इस प्रकार के जल से सिंचित कच्ची सब्जियों का उपयोग काफी हानिकारक है इस समस्या के ऊपर आज तक बहुत कम ध्यान दिया गया है, हालांकि वैज्ञानिकों का यह विचार है कि इस प्रकार के जल के प्रयोग से कुछ सब्जियां जैसे मूली, सलाद इत्यादि की वृद्धि काफी अधिक होती है लेकिन साथ ही साथ सब्जियों के उतकों में बीमारी फैलाने वाले जीवाणुओं की संख्या काफी बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप इस प्रकार की सब्जियां खतरनाक बीमारियों के गुप्त वाहक के रूप में काम करती हैं।

शहरों के विकास के परिणामस्वरूप वहां पर कंकरीट एवं असफाल्ट वाले क्षेत्रफल की वृद्धि के साथ साथ प्राकृतिक रूप से उगने वाले पेड़-पौधों की संख्या घटती जा रही है। इस प्रकार से यह आवश्यक हो जाता है कि हम पेड़ पौधों की अनुपस्थिति में मानव पर्यावरण की दशाओं के बारे में विचार करें और शहरी जगहों में वनस्पतियों के महत्व को क्रियात्मक एवं सौन्दर्यात्मक ढंग से समझें। शहरी पर्यावरण में चार प्रकार के प्रदूषण पाए जाते हैं:—1. ध्वनि प्रदूषण, 2. गैस प्रदूषण 3. चिमनी के धुंए द्वारा प्रदूषण 4. ताप प्रदूषण। शोभाकारी पौधों को इन जगहों पर लगाने से इस प्रकार के प्रदूषण में काफी कमी लाई जा सकती है। यह देखा गया है कि अत्यधिक उत्तेजक ध्वनि के प्रभाव को ये पौधे काफी कम कर देते हैं। पाइन की 50 से 100 फीट मोटी कतार 10 से लेकर 20 डेसिबल ध्वनि को कम कर देती है। सड़कों एवं इस प्रकार के अन्य स्थानों में पौधों की उचित किस्मों को, उचित दूरी एवं उचित ढंग से लगाने से इस समस्या का समाधान काफी हद तक किया जा सकता है।

वायु प्रदूषण का प्रभाव पौधों के लिए काफी हानिकारक है। लेकिन इस बात पर कम ध्यान दिया गया है कि पौधे वातावरण को शुद्ध बनाने में प्राकृतिक छलनी का काम करते हैं। प्रदूषण उस सीमा तक नहीं पहुंचना चाहिए कि वह पौधों के लिए विषैला बन जाए। ऐसा होने से पौधे मर जाते हैं। पौधे दो प्रकार से प्रदूषण को दूर करते हैं। प्रारम्भिक रूप में पौधे प्रदूषण के स्रोत को ही समाप्त कर देते हैं तथा दूसरे रूप में वे वातावरण को छलनी के रूप में शुद्ध करते रहते हैं। पौधे सल्फर डाइआक्साइड तथा हाइड्रोजन फ्लोराइड की कुछ सीमित मात्रा को बिना किसी हानिकारक प्रभाव के उपयोग में लाते रहते हैं। शहर के पार्कों में लगे शोभाकारी पौधे इस काम के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान कांग्रेस (1980) में पढ़े गए एक प्रपत्र के अनुसार आम के पौधे वातावरण में उड़ते हुए धुंए के साथ छोटे छोटे कणों को छानने में काफी सहायक पाए गए हैं।

उद्योग धंधे, ताप पैदा करने वाले एवं वातानुकूलन जो शहर में गर्मी पैदा करने के एक प्रधान स्रोत हैं, शहर को अपने आस-पास के वातावरण की तुलना में काफी गर्म रखते हैं। शहरों का औसत तापमान अपने आस पास के वातावरण की तुलना में काफी गर्म रखते हैं। शहरों का औसत तापमान अपने आस-पास के वातावरण से 0.9 फार्नहाइट से 1.4 डिग्री फार्नहाइट तक अधिक होता है। कभी कभी यह अन्तर बढ़कर 10 डिग्री फार्नहाइट तक पहुंच जाता है। शहर की जनसंख्या जितनी ही अधिक होगी, शहर उतना ही अधिक गर्म होगा। कंकरीट एवं सीमेंट से बने हुए महल एवं पक्के रास्ते सूर्य के ताप को शोषित करके भी शहर के तापमान को काफी बढ़ा देते हैं। इसकी अपेक्षा वनस्पतियां सूर्य के ताप की काफी मात्रा को वायुमण्डल में वापिस लौटा देती हैं। इसलिए शहर के अन्दर जहां वनस्पतियां होती हैं उनके द्वारा पानी के वाष्पीकरण के कारण वातावरण का तापमान काफी कम रहता है। इसके अतिरिक्त, छायादार वृक्ष सूर्य के ताप को जमीन पर पड़ने से रोक कर वातावरण के तापमान में 2 डिग्री फार्नहाइट से 3 डिग्री फार्नहाइट तक कमी करते पाए गए हैं। पर्णपाती वृक्ष सूर्य के ताप को वायुमंडल में वापिस लौटाने में काफी महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। गरमी के मौसम में जब सूर्य का ताप बहुत अधिक होता है तथा छाया एवं शीतलन की आवश्यकता सबसे अधिक होती है, तो ये वृक्ष हरी-भरी पत्तियों से लदे होते हैं। इसके विपरीत जाड़े के समय में जब सूर्य के ताप की आवश्यकता अधिक होती है तो ये वृक्ष पर्ण रहित होते हैं।

शहर के अन्दर हरे-भरे स्थानों को अगर शहर का फेफड़ा कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। सड़कों के दोनों तरफ वृक्ष के लगाने से हवा की गति को काफी हद तक रोका जा सकता है। ये वृक्ष वातावरण को वातानुकूलित करके उसे काफी सुहावना बना देते हैं। इसके अतिरिक्त, ये ध्वनि की गति को रोककर ध्वनि प्रदूषण को कम करने में भी काफी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं तथा प्रदूषक वस्तुओं को वातावरण में आने से रोकते भी हैं।

इस लेख के लिखने का सारांश यह है कि आधुनिक युग में, जब हमारा देश विकास की ओर अग्रसर हो रहा है, शहरों में नए नए उद्योग धंधे बनते जा रहे हैं तथा गांवों से निकलकर शहरों में बसने के कारण शहरों की आबादी बढ़ती जा रही है, लोगों में इस बात की जागरूकता होनी चाहिए कि वे अपने नगर के वातावरण को नाना प्रकार के प्रदूषणों से बचाने के लिए प्रयत्नशील रहें। वे इस दिशा में शोभाकारी पेड़-पौधों या फलदार वृक्षों को आम जगहों जैसे स्कूल, पार्क, रोड साइड इत्यादि में लगाकर वातावरण को काफी सीमा तक शुद्ध एवं स्वस्थ रख सकते हैं। ☐

फल उद्यान विज्ञान विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली।

कहानी

जब लक्ष्मी स्थायी हो गई

* पूरन सरमा *

बहुत पुरानी बात है, भारत के किसी नगर में एक भाग्यशाली पर आलसी वणिक रहता था। बिना परिश्रम किए उसका भाग्य उसका साथ नहीं दे रहा था। रोज-रोज उसकी पत्नी कुछ करने को कहती, पर वह निकम्मा इतना कि उसके कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। एक दिन पत्नी का पारा आसमान पर चढ़ गया और वह बोली-देखो जी, यदि आज तुम घर में कुछ लेकर नहीं आए तो न खाना है और न स्थान और यह भी समझो कि मैं भी कहीं . . . । क्योंकि वह जानती थी कि पुरुषार्थ ही भाग्य के द्वार खोलता है ।

वणिक ने कुछ सोचा और उठकर घर से निकल गया। सारे दिन भर भटकता रहा पर कुछ नहीं मिला। सांय लौटते समय उसे एक मरा सांप दिखाई दिया। उसने उसे उठा लिया। अड़ौस-पड़ौस के लोग हंसने लगे उसके इस कर्म पर। पत्नी ने कहा - चलो कुछ तो लाए, आज गलत लाए एक दिन कुछ सही लेकर आओगे। पत्नी ने मृत सांप को मकान की छत पर डाल दिया।

उसी दिन इत्फाक कहिए - नगर के राजा की रानी अपना कीमती हार बाहर रखकर स्नानागार में नहाने चली गई। इधर एक चील हार को खाद्य सामग्री समझकर उठा ले गई और आकर बैठी तो उसी वणिक की छत पर और फिर उस चील ने हार तो वहां छोड़ा और मृत सांप को उठाया और उड़ गई।

वणिक की पत्नी किसी काम से छत पर आई तो हार को देखकर आश्चर्य हुआ। हार लेकर वह नीचे आई। पड़ौसियों को मालूम हुआ तो वह भी वणिक की बुद्धि को सराहने लगे। वणिक की पत्नी को जब मालूम हुआ कि हार रानी का है तो वह हार लेकर राजदरबार में पहुंची। राजा खुशी से भर उठा और बोला - मैंने तुझे धर्म बहिन बना लिया। मांग बहिन क्या मांगती है ?

वणिक की पत्नी चालाक थी, उसने धन-जमीन कुछ भी न मांगकर मांगा - भाई कल दीवाली का महापर्व है, उस दिन मेरे घर के अलावा किसी के यहां दीपक न जलें, सारे नगर में यह घोषणा करवा दी जाए।

बात अटपटी राजा को जरूर लगी, पर वह वचनबद्ध था। अत: विवश था, राजा ने दूसरे दिन नगर में घोषणा करवा दी कि कोई भी दीप नहीं जलाएगा, सिर्फ वणिक की पत्नी ने ही दीप जलाए और लक्ष्मी का पूजन करने में लग गई।

लक्ष्मी सभी स्थानों पर अंधकार देखकर तथा अपना अनादर देखकर वह उसी मकान में आई और दरवाजा खटखटाने लगी - द्वार खोलो।

[शेष आवरण पृष्ठ उपर]

ग्रामीण सहकारी समितियों के व्यापक जाल के पीछे

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम

का अथक प्रयास है।

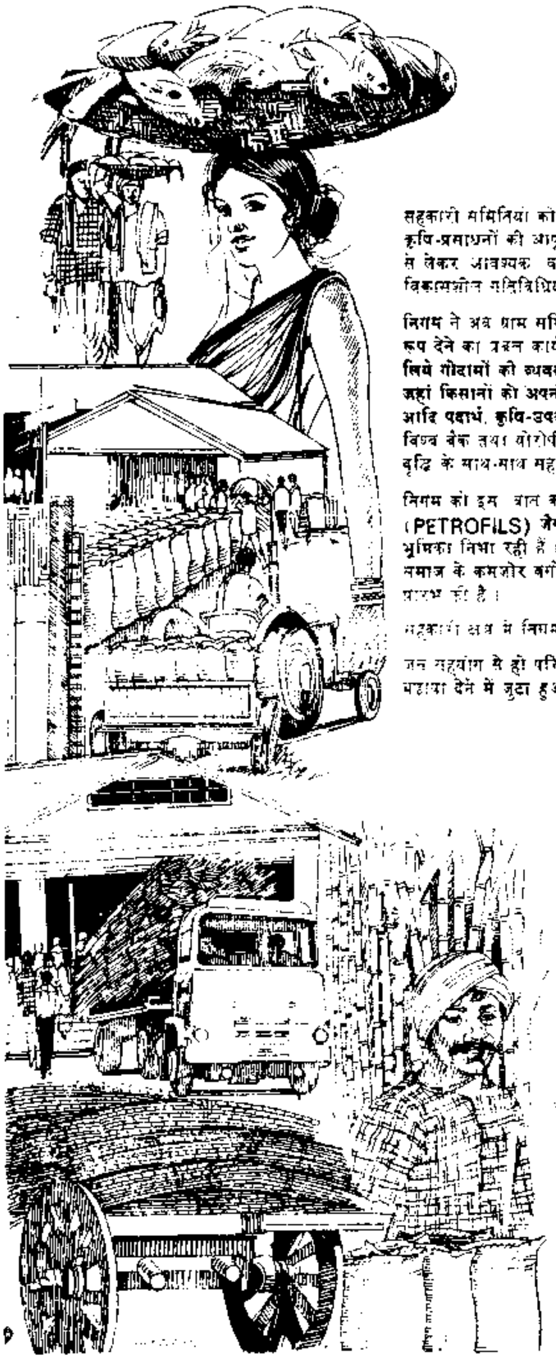

सहकारी समितियों को ठोस और मजबूत आधार प्रदान करने के लिये निगम निरन्तर सक्रिय है। कृषि-प्रसाधनों की आपूर्ति से लेकर उत्पादन के भंडारण और विपणन तक, कृषि उत्पादनों की प्रक्रिया से लेकर आवश्यक वस्तुओं के वितरण तक, कृषि अर्थ-व्यवस्था के सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में इसकी विकासशील गतिविधियां आगे बढ़ रही है।

निगम ने अब ग्राम समितियों को अधिक सुदृढ़ बनाने के लिये उन्हें बहुमुखी सहकारी संस्थाओं का रूप देने का गहन कार्यक्रम शुरू किया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अतिरिक्त उपज के भंडारण के लिये गोदामों की व्यवस्था की जायेगी। इन सहकारी गोदामों को विकास केन्द्र का रूप दिया जायेगा जहां किसानों को अपनी सभी मुख्य आवश्यकताएं प्राप्त हो सकेंगी जैसे उर्वरक, बीज, कीटनाशक आदि पदार्थ, कृषि-उपकरण, आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं तथा ऋण की सुविधाएं। यह कार्यक्रम विश्व बैंक तथा योरोपीय आर्थिक समुदाय की सहायता से कार्यान्वित हो रहा है। परियोजनाओं में वृद्धि के साथ-साथ सहायता में भी वृद्धि हो रही है।

निगम को इस बात का गर्व है कि उसने इफको (IFFCO), नफेड (NAFED) तथा पेट्रोफिल्स (PETROFILS) जैसी सहकारी संस्थाओं का प्रवर्तन किया जो राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। निगम ने मछेरों, बुनकरों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों आदि समाज के कमजोर वर्गों की सहायता के लिये सहकारी समितियों को प्रोत्साहन देने की विशेष योजना प्रारम्भ की है।

सहकारी क्षेत्र में निगम अब तक ३०० करोड़ रुपये से अधिक धन राशि लगा चुका है।

जन सहयोग से ही परियोजनाएं यथार्थ रूप धारण करती रहती है और निगम इसी सहयोग को सहारा देने में जुटा हुआ है।

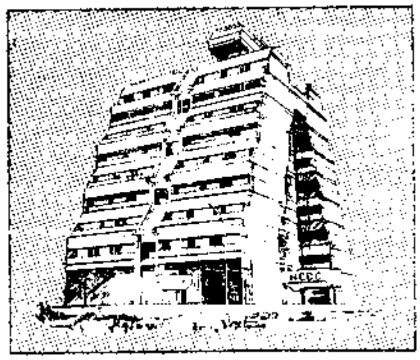

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम

(एक अनुविहित निगम)

प्रधान कार्यालय, ४-सिरी इंस्टीट्यूशनल एरिया हौज़ खास,
नई दिल्ली-११००१६

क्षेत्रीय कार्यालय बंगलौर • कलकत्ता • चंडीगढ़ • गौहाटी
• जयपुर • लखनऊ • पुणे

साहित्य समीक्षा

भारत : वार्षिक संदर्भ ग्रंथ 1980 : प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 705, मूल्य : 21 रुपये ।

राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न पहलुओं से संबंधित सरकारी और अन्य अधिकृत सूत्रों से एकत्रित अद्यतन सूचना से परिपूर्ण यह ग्रंथ अनेक धंधों के लोगों के लिए उपयोगी है। इसमें भारत और उसके निवासियों के बारे में उपयोगी जानकारी और सारणियां दी गई हैं । 'राष्ट्र के प्रतीक' अध्याय के अंतर्गत राष्ट्रीय झंडा, राज चिन्ह, राष्ट्र गीत और राष्ट्रीय पचांग के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी है। इसके बाद सरकार के ढांचे, मूल अधिकारों, राष्ट्रपति, मंत्रिपरिषद्, राजभाषा, संसद और राज्य सरकारों का संक्षिप्त विवेचन है।

पुस्तक में रक्षा, शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान, ऊर्जा कृषि, वित्त, परिवहन संचार आदि के बारे में विस्तृत और प्रमाणिक जानकारी दी गई है। ग्यारहवें अध्याय में राष्ट्रीय तथा प्रति व्यक्ति आय, रोजगार और बेरोजगारी और थोक एवं श्रमिक वर्ग उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के बारे में उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक सूचना दी गई है। जन सम्पर्क माध्यम अध्याय के अन्तर्गत रेडियो, दूरदर्शन, समाचार एजेन्सियों, फिल्मों और जन सम्पर्क माध्यमों के इतिहास, भूमिका और देश की प्रगति में उनके योगदान की चर्चा की गई है।

पुस्तक में 1979 की महत्वपूर्ण घटनाओं पर भी एक अध्याय है। परिशिष्ट में केन्द्रीय सरकार की (9 जून 1980 को) स्थिति, संसद-सदस्यों (राज्य सभा एवं लोक सभा) के नाम, 1979 में असैनिक, वीरता और विशिष्ट सेवा पुरस्कार पाने वाले लोगों की सूची, विभिन्न अकादमी पुरस्कारों से पुरस्कृत लोगों की सूची, चल चित्रों के राष्ट्रीय पुरस्कार और भारत में विदेश राजनयिकों के नाम दिए गए हैं। पुस्तक पर एक नजर डालते ही यह साफ हो जाता है कि इसे छात्रों, पत्रकारों, लेखकों और दूसरे वर्ग के लोगों के लिए उपयोगी बनाने के लिए कोई कसर उठा नहीं रखी गई है।

पुस्तक में दिए गए चार मानचित्रों, अनेक चार्टों और चित्रों ने इसे और भी उपयोगी एवं आकर्षक बना दिया है। इन दिनों पुस्तकों के ऊंचे दामों को देखते हुए 715 पृष्ठों की इस सजिल्द पुस्तक 20 रुपये मूल्य नगण्य है। समसामयिक विषयों में दिलचस्पी रखने वाला पाठक इसे बहुत ही उपयोगी पाएगा। इसमें कोई संदेह नहीं है । ☐

—नवीन चन्द्रपन्त
170—लक्ष्मीबाई नगर
नई दिल्ली

दुष्ट कुमार : लेखक : डा. भगवतीशरण मिश्र, प्रकाशक : राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 60, मूल्य : 5 रुपये।

'दुष्ट कुमार' डा. भगवतीशरण मिश्र की कहानियों का संग्रह प्रौढ़ शिक्षा एवं सामाजिक शिक्षा के प्रति प्रभावोत्पादक कृति है। इस पुस्तकमाला से डा. मिश्र जी ने 11 कहानियों के माध्यम से वर्तमान सामाजिक बुराइयों को दूर करने का उचित मार्गदर्शन किया है।

प्रथम कहानी दुष्ट कुमार के माध्यम से लेखक ने जहां एक ओर सर्प, चूहा, एवं सुग्गा के हृदय में अपने प्रति किए गए परोपकार को स्मरण रखने की भावना जागृत की है वहीं दूसरी ओर दुष्ट कुमार के हृदय में कृतघ्नता का भाव प्रदर्शित करके बुराई का फल बुराई के रूप में प्राप्त होने की यथार्थता सिद्ध की है। दूसरी कहानी में जहां बौद्धिक ज्ञान के माध्यम से धन का मोह त्यागने का भाव स्पष्ट किया है, वहीं तीसरी कहानी मरुभूमि के द्वारा कर्तव्य-परायणता के आधार पर सफलता प्राप्ति का भाव समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है।

लेखक ने 'लक्षण और काल' कहानी के द्वारा सदैव सोच समझकर समय के अनुरूप कार्य करने की प्रेरणा दी है, वहीं अभयदान नामक कहानी प्राणियों पर दया करना सर्वश्रेष्ठ धर्म की परिभाषा व्यक्त करती है।

मनुष्य अथवा जीव मात्र के पतन का कारण लालच ही होता है, लालची हरिण कहानी के द्वारा लेखक ने इन्द्रिय निग्रह को आवश्यक बताया है। आज समाज में इन्द्रिय लोलपता के कारण ही अनेक बुराइयां फैल रही हैं।

डा. मिश्र ने सातवीं कहानी के द्वारा अपने शुभचिंतक की बात मानने को प्रेरित किया है, 'कुत्ते का न्याय' कहानी के द्वारा केवल सन्देह पर कार्य करने की बात को गलत बताते हुए सबसे बड़े अपराध की संज्ञा दी है।

लेखक ने लालची कौवे की कहानी से विश्वासघात का फल बुरा होने का भाव स्पष्ट किया है। हंसने वाला भेड़ा नामक कहानी के माध्यम से एक प्राणी द्वारा दूसरे प्राणी की हत्या न करने का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है।

डा. मिश्र ने अपनी अन्तिम कहानी में एकता में शक्ति भाव स्पष्ट करते हुए वर्तमान समाज को एक होकर सामाजिक उत्थान के प्रति कार्यरत होने की प्रेरणा दी है। संघ शक्ति का भाव आज का प्रत्येक समाज एक दूसरे से अलग रहना पसन्द करने लगा है अतः सामाजिक उन्नति एकता के आधार पर ही संभव है।

डा. भगवतीशरण मिश्र की ये कहानियां सरलता से प्रौढ़ शिक्षा में भाग लेने वाले शिक्षार्थियों के लिए उपयुक्त सिद्ध होंगी। अतः डा. मिश्र का यह संग्रह प्रशंसनीय है एवं प्रभावोत्पादक है।

आर० के० दत्त शास्त्री
प्राध्यापक
रा. ब. विद्यालय,
दिल्ली राज्य, दिल्ली

प्रभु ही मेरा रक्षक है : सम्पादक : विष्णु प्रभाकर, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल और श्रीकृष्ण जन्मस्थान सेवा संस्थान पृष्ठ संख्या : 110 मूल्य : तीन रुपये।

राष्ट्रपिता महात्मागांधी के जीवन और चिंतन के बारे में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। लेकिन गांधीजी के जीवन में घटी प्रेरणाप्रद घटनाओं को संक्षेप में बहुत ही सरल और सुरुचिपूर्ण ढंग से सामान्य जन तक पहुंचाने के उद्देश्य से तैयार की गई यह पुस्तक ''गागर में सागर'' लोकोक्ति को चरितार्थ करती है। गांधीजी चरित्र को सबसे ज्यादा महत्व देते थे और जो कहते थे उसका अपने जीवन में पालन भी यथासम्भव करते थे। अन्य गुणों के अलावा यह उनका महानतम गुणथा। 'प्रभु ही मेरा रक्षक है' में संकलित प्रसंगों में गांधीजी का ईश्वरीय-शक्ति में अटूट विश्वास स्पष्ट प्रतिबिम्बित होता है जब एक बार गांधीजी अपने आश्रम में भोजनघर में दूसरी घण्टी बजने तक नहीं पहुंचे तो नियमानुसार बाहर ही दूसरी पंक्ति के बैठने की प्रतीक्षा करते रहे और बाकायदा खड़े रहे। इसी तरह यरवदा जेल में नीम की दातुन को तब तक इस्तेमाल किया जब तक वह सचमुच सूख नहीं गई। क्योंकि वे रोजाना एक नई दातुन तोड़कर नीम की आत्मा और शरीर को कष्ट नहीं देना चाहते थे। चम्पारन में जब एक गोरे ने गांधीजी के लिए हत्यारे तैनात किए, तो उन्होंने प्रभु में आस्था के बल पर अकेले ही उस गोरे के पास जाकर उसे आश्चर्यचकित कर दिया। यह प्रसंग चाहे बिल्कुल साधारण लगें और इनमें साहित्यिकता और शब्द-लावण्य का सर्वथा अभाव हो सकता है, मगर इन्हें पढ़कर पाठक का मन एक बार तो जरूर सोचने को मजबूर हो जाता है। परमात्मा की सर्वशक्तिमत्ता में निरन्तर विश्वास करने वाले बापूजी की महानता के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। वैसे तो सभी वर्गों, और सभी आयु के लोगों के लिए यह पुस्तक प्रेरणाप्रद है लेकिन विशेष रूप से कच्ची उम्र के बच्चों के चरित्र निर्माण में यह पुस्तक बहुत सहायक सिद्ध हो सकती है। स्कूली शिक्षा प्राप्त करने तक की आयु में ही बालक का चरित्र विकसित होता है और उस अवस्था में जैसा भी उसे मोड़ा जाएगा वह वैसा ही बन जाएगा। इसलिए सीधी-सादी भाषा में लिखी यह पुस्तक भावी पीढ़ी का पथ-प्रदर्शन करने में अत्यंत उपयोगी है। यह पुस्तक दस पुस्तकों की माला की एक कड़ी है। इस तरह की पुस्तक-मालाएं अधिक से अधिक संख्या में प्रकाशित हों तो राष्ट्र में स्वस्थ वातावरण बनाने में मदद मिल सकती है। पुस्तक में साज सज्जा या चित्र जैसे अलंकरणों का सहारा नहीं लिया गया है और शायद यही कारण है कि इसका मूल्य इतना कम रखा जा सका है। प्रकाशक निःसंदेह इसके लिए बधाई के पात्र हैं। □

त्रिलोकी नाथ
डी-90, नारायणा विहार, नई दिल्ली-110028

मंधरभ क। डु रमों

तलवार की चोरी : लेखक : मदनमोहन श्रीवास्तव, प्रकाशक: कादम्बरी प्रकाशन, ए-55/1, सुदर्शन पार्क, नई दिल्ली-15, पृष्ठ : संख्या 40, मूल्य : 6 रुपये

तलवार की चोरी' में सात बालकथाएं संकलित की गई हैं। इनमें से प्रथम पांच कथाएं अर्थात् 'सेबों की चोरी', 'राजकुमारी का साहस', 'सौतेली मां', 'तलवार की चोरी' तथा 'भुजन की होशियारी' तो पूर्णरूपेण राजकुमार, राजा तथा परियों के प्रसंगों से ओत-प्रोत हैं। 'तीन-दो की लड़ाई' में पण्डित और पण्डितानी की जिद को लेकर कथा-संयोजन किया गया है और संग्रह की अन्तिम कहानी 'सियारनी की चतुराई' में सिंह की मन्दबुद्धि तथा सियार-सियारनी की कुशाग्र बुद्धि का परिचय दिया गया है। ये सभी कहानियां इतनी रोचक और चित्ताकर्षक शैली में लिखी गयी हैं कि पाठक पुस्तक को एक बार आरम्भ करके समाप्त किये बिना नहीं रह सकता। प्रत्येक कहानी पाठकों के हृदय-तट पर किसी न किसी प्रभावशाली उपदेश के दृश्य का चित्रांकन कर जाती है। किसी कहानी में भाई-बहन के स्नेह की झांकी है तो किसी में वीरता, साहस और अदम्य शक्ति का परिचय। कथाओं के साथ-साथ मुद्रित रेखांकन कथा को और अधिक मनोहारी बना देते हैं। वास्तव में ,विवेच्य कृति पठनीय एवं संग्रहणीय है।

--हरिवंश अनेजा
ए-55/1, सुदर्शनपार्क,
नयी दिल्ली-110015

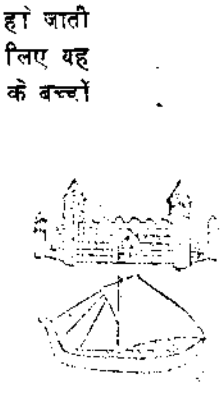

जीवन का सत्य

किसने कह दिया कि
जीवन आज और कल का ही संचय।
जीवन नहीं पलायन
जीवन नहीं समर में पीठ दिखाना,
जीवन नहीं विरत होना भी है-
स्वधर्म से, प्रेय-श्रेय से।
मोह शोक संविग्न हुआ मन-
ममता के दलदल में धंसता,
अहंकारवश फंसता अथवा
कामनाओं की स्वर्ण-मृगी-सी
तृष्णाओं में,
फिर अतृप्ति के कोह गर्त में
गिरता, पड़ता स्व-निर्मित आवर्तों में
सम मूढ़ पथ-हारा उद्विग्न-
धनंजय-सा
कंपित हाथों से
कर्म-धनुष की प्रत्यंचा को शिथिल छोड़-
कर-
अपने ही प्रश्नों में उलझा
गढ़ता परिभाषाएं सुख की,
दुखकी, लाभ-अलाभ, पराजय-जय की,
पाप-पुण्य की, जन्म-मरण की
नरक-स्वर्ग व मर्त्य लोक की-
तभी इसे आकर्षित करता कृष्ण-
सयुजा, सखा, सजातीय बंधु,
वही इसे झकझोर
चेतना के तट लाता,
राग-द्वेष, सुख-दुख को केवल
एक कल्पना, खेल बताता
असत्य।
एक मान्यता झूठी मन की।
मन से परे वही दिखलाता
सत्य, शाश्वत शुभ सदा ही :
श्री, विभूति, समृद्धि विजय की,
केवल एक कसौटी देता-
समता।
समता सच्चा योग-'समत्वं योग उच्यते',
उसकी वाणी सत्य-
सदा अस्तित्व सत्य का।
जीवन का भी सत्य यही
सुख-दुख में समता
राग-द्वेष और हर्ष-शोक की
स्थिति झूठी,
झूठी ममता और अहं झूठा
सच माना।
इसने ही द्धंन्द्धों से घेरा-
जीवन का वह सत्य
अलिप्त, अकाश सदृश जो।
झूठे अवर्तों का छेदन
करता है गाण्डीव कर्म का-
निरासक्त हो जो प्रवृत्त है,
जीवन सत्य उसे पाता है-
पाप-पुण्य और अहंकार न छू पाता है।
द्धन्द्धातीत हुआ निज कर्मों में
रत होना'
सच्चा सुख है,
सच्चा जीवन।

राजेन्द्र शर्मा
1625, द्वारकापुरी,
दिल्ली-110032

जब लक्ष्मी स्थायी हो गई

[पृष्ठ 41 का शेषांश]

वणिक की पत्नी ने पूछा - कौन है तू?

लक्ष्मी जी ने अपना परिचय दिया।

वणिक की पत्नी बोली - देवी आओ, आपका हृदय से स्वागत है, पर एक शर्त है प्रतिज्ञा करो कि इस घर को सात पीढ़ी तक छोड़कर नहीं जाओगी।

लक्ष्मी जी बोली - बहिन मेरा नाम तो चंचला है, इतने दिनों तक मैं एक जगह कैसे रह सकती हूं।

तब फिर तुम मेरे घर में नहीं आ सकती, देवी।

लक्ष्मी वापिस मुड़ गई और शहर में जगह देखने लगी। सारे नगर में घुप अंधेरा छाया हुया था, केवल वणिक का घर ही जगमगा रहा था। लक्ष्मीजी अंधेरे से डर गई और वे वापिस वणिक के दरवाजे पर आकर सहमती हुई बोली - जल्दी खोलो बहिन दरवाजा। पर वणिक की पत्नी ने अपनी प्रतिज्ञा दुबारा दोहरा दी।

तब लक्ष्मीजी बोली - मेरी भी कुछ शर्तें तुम्हें स्वीकार करनी होंगी।

वणिक की पत्नी के हां करने पर लक्ष्मीजी ने अपनी शर्तें बताईं-सभी प्रकार के दुर्व्यसनों से दूर रहेंगे परिवार के सभी सदस्य, कभी जुआ नहीं खेलेंगे, पारस्परिक स्नेह व सौहार्द के साथ रहेंगे, किसी प्रकार का लांछन न लगाएंगे, मांस-मदिरा का सेवन नहीं करेंगे, और केवल स्वार्थी ही नहीं बने रहेंगे।

वणिक की पत्नी ने सारी शर्तें स्वीकार कर लीं और दरवाजा खोल दिया, वणिक धनाड्य हो गया और सुख से रहने लगा। लक्ष्मीजी के स्थाई होने की यह शर्त आज भी है।

पूरन सरमा
सिकन्दरा-303326, जयपुर (राजस्थान)

निदेशक, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित, 1981